।। ओ३म् ।।


पाक्षिक

# परोपकारी

• वर्ष ५९ • अंक १७ • मूल्य ₹१५ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र • सितम्बर ( प्रथम ) २०१७

## आर्षपाठविधि के संस्थापक

# गुरुवर स्वामी विरजानन्द सरस्वती

प्रयाण १४ सितम्बर १८६८

महर्षि दयानन्द शोधपीठ के प्रारूप पर विचार-विमर्श करते हुए महर्षि दयानन्द विश्व विद्यालय के कुलपति डॉ. भगीरथ सिंह, शोधपीठ के निदेशक- डॉ. प्रवीण माथुर एवं परोपकारिणी सभा के अधिकारीगण।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

**वर्ष : ५९ अंक : १७**

दयानन्दाब्द: १९३

विक्रम संवत्: भाद्रपद शुक्ल २०७४

कलि संवत्: ५११८

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११८

**सम्पादक**

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

**प्रकाशक**-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

**मुद्रक**-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१


## परोपकारी का शुल्क

**भारत में**

**वार्षिक**-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.,
**त्रिवार्षिक**-५८० रु.,
**आजीवन** (१५ वर्ष)-२००० रु.।
**एक प्रति** - १५/- रु.

**विदेश में**

**वार्षिक**-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
**द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डॉ.,
**त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डॉ.,
**आजीवन** (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
**एक प्रति** - ३ पाउण्ड
**एक प्रति** - ४ डॉलर

**वैदिक पुस्तकालय :** ०१४५-२४६०१२०
**ऋषि उद्यान :** ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

*विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,*
*सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।*
*संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,*
*धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।*


**RNI. No. ३९५९ / ५९**


# परोपकारी

## सितम्बर प्रथम २०१७

## अनुक्रम


| | | |
|---|---|---|
| ०१. महर्षि दयानन्द शोध-पीठ | सम्पादकीय | ०४ |
| ०२. बलिवैश्वदेव यज्ञ-१ | डॉ. धर्मवीर | ०६ |
| ०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प | प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' | ११ |
| ०४. विविध विद्याओं और कलाओं.... | पं. उदयवीर शास्त्री | १६ |
| ०५. शिक्षक सामान्य नहीं होता | प्रभाकर आर्य | २० |
| ०६. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण | | २३ |
| ०७. पाठकों के विचार | | २४ |
| ०८. वेद गोष्ठी-२०१७ के लिए निर्धारित विषय | | २५ |
| ०९. आचार्य: उपनयमानो ब्रह्मचारिणं... | सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार | २८ |
| १०. शङ्का - समाधान - ७ | डॉ. वेदपाल | ३४ |
| ११. लोकोत्तर धर्मवीर-५ | तपेन्द्र वेदालंकार | ३६ |
| १२. पुस्तक समीक्षा | सोमेश 'पाठक' | ३९ |
| १३. संस्था-समाचार | | ४० |
| १४. आर्यजगत् के समाचार | | ४२ |


www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

**- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -**
**www.paropkarinisabha.com →**


*लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।*

# महर्षि दयानन्द शोध-पीठ

राजस्थान के महामहिम राज्यपाल एवं कुलाधिपति श्री कल्याण सिंह जी के सत्प्रयास से महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर में 'महर्षि दयानन्द शोध-पीठ' खोलने एवं एक करोड़ रुपए की आर्थिक राशि से उसे संचालित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादित किया गया। इस हेतु परोपकारिणी सभा एवं समस्त आर्यजन महामहिम का हृदय से आभार ज्ञापित करना अपना पुनीत कर्त्तव्य मानते हैं। ध्यातव्य है कि कीर्तिशेष आचार्य धर्मवीर जी के विगत 25 वर्षों के अथक प्रयासों के फलस्वरूप विश्वविद्यालय में 'महर्षि दयानन्द शोधपीठ' की स्थापना हुई और आचार्य धर्मवीर जी का स्वप्न साकार हुआ। परोपकारिणी सभा ही महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न उत्तराधिकारिणी सभा है जिसके उद्देश्यों में निहित है कि ''वेद और वेदाङ्गादि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने-कराने, पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने, छापने-छपवाने आदि में, वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक मंडली नियत करके देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में भेजकर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में, आर्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण, पोषण और सुशिक्षा में व्यय करने और कराने में इत्यादि।''

आचार्य धर्मवीर जी इन्हीं उद्दश्यों की पूर्ति करने हेतु निरन्तर प्रयास करते रहते थे, इसीलिए पूर्व में 'महर्षि दयानन्द अनुसंधान केन्द्र' की मान्यता हेतु भी कार्य किया गया था, जिसके लिए विश्वविद्यालय से तत्कालीन कार्यवाहक कुलपति श्री तपेन्द्र वेदालंकार (आई.ए.एस.) संभागीय आयुक्त के आदेशों के अनुसार अनुसंधान केन्द्र खुलने की मान्यता प्राप्त हुई, लेकिन किन्हीं कारणों से परवर्ती कुलपतियों ने अनेक नियम बनाकर **महर्षि दयानन्द अनुसंधान केन्द्र** के आदेश जारी नहीं किए थे।

वर्तमान में **महर्षि दयानन्द शोधपीठ** की स्थापना में राजस्थान के माननीय लोकायुक्त श्री सज्जन सिंह जी कोठारी का अत्यन्त रचनात्मक सहयोग प्राप्त हुआ, जिसके लिए सभा और आर्यजन उनका हार्दिक अभिनन्दन एवं आभार ज्ञापित करते हैं। विश्वविद्यालय के वर्तमान कुलपति प्रो. भगीरथ सिंह जी की योजकता और दूरदृष्टि का ही यह परिणाम है कि उन्होंने तत्काल एतद्विषयक् शोधपीठ की कार्यप्रणाली, उसके उद्देश्य तथा महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय को महर्षि दयानन्द के विचारों के अनुरूप अभिव्यक्ति प्रकट करने हेतु अजमेर के सभी आर्य विद्वज्जनों, आर्यसमाज और परोपकारिणी सभा के अधिकारियों, ऋषि उद्यान गुरुकुल के आचार्य तथा छात्रों के साथ सकारात्मक विचार-विमर्श किया। यह स्तुत्य है।

महर्षि दयानन्द शोधपीठ भारत में अनेक स्थानों पर स्थापित की गई, जहाँ नियुक्त पीठासीनों ने यथाशक्ति वेद, वैदिक साहित्य तथा महर्षि दयानन्द के विचारों के अनुरूप शोधकार्य करने, संगोष्ठी आयोजित करने एवं संबन्धित शोध-कार्यों के प्रकाशन का प्रशंसनीय कार्य किया है। लेकिन यह यक्ष-प्रश्न है कि वर्तमान में महर्षि दयानन्द शोधपीठ की सार्थकता किस प्रकार सिद्ध हो। हमारे विचार में इस संबन्ध में निम्नलिखित बिन्दु चिन्तनीय हैं-

1. महर्षि दयानन्द 19वीं शताब्दी के पुनर्जागरण के महान् योद्धा थे, इसलिए तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक स्थितियों में महर्षि के विचारों के प्रभाव का अध्ययन करना। उल्लेखनीय है कि महिला-उत्थान, दलित-उत्थान, अस्पृश्यता-निवारण, ऊँच-नीच का विरोध, बाल-विवाह का विरोध, विधवा-विवाह का समर्थन, महिला और दलितों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार, गुरुकुलीय व्यवस्था के पुनरुद्धारक महर्षि दयानन्द इत्यादि विभिन्न विषयों पर विशिष्ट कार्य आर्यजनों ने किए और उनके कारण भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को एक निर्णायक गति मिली। फलस्वरूप महर्षि दयानन्द के उपरान्त भारत में जितने भी आन्दोलन हुए सभी आन्दोलनों में स्पष्टत: महर्षि दयानन्द और आर्य समाज का प्रभाव प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में परिलक्षित हुआ है। इन सबका सघन और शोधपूर्ण अध्ययन अपेक्षित है, जिससे वर्तमान काल में सुधी विद्वानों को महर्षि दयानन्द की देन से भली प्रकार अवगत करवाया

जा सके।

2. महर्षि दयानन्द ने ही सर्वप्रथम भारतीय इतिहास के संबन्ध में नवीन दृष्टि प्रदान कर उसे तथ्यपरक और भारतीय परम्परा और धरोहर के अनुसार विवेचित किया। ऐतिहासिक तथ्यों एवं भारतीय कालगणना का यह सुव्यवस्थित कार्य कर महर्षि ने परवर्ती पौर्वात्य और पाश्चात्य दोनों ही श्रेणी के इतिहासकारों को विचारणीय मुद्दा दिया, जिसके कारण एतत्संबन्धी विचार-विमर्श प्रारम्भ हुआ और प्राचीन भारतीय संस्कृति को हेय और निकृष्ट समझने वाली लॉर्ड मैकाले द्वारा समर्थित अवधारणा शनैः शनैः शिथिल हुई।

3. संस्कृत भाषा और उसके साहित्य को भली प्रकार पाणिनीय शिक्षापद्धति से अध्ययन और अध्यापन की आर्ष परम्परा का आधुनिक काल में प्रवर्त्तन एवं प्रचार गुरुवर विरजानन्द एवं महर्षि दयानन्द ने किया। जिसके कारण मैक्समूलर जैसे व्यक्ति को यह कहना पड़ा कि विश्व की प्रचीनतम भाषा संस्कृत का पाणिनीय व्याकरण सर्वाधिक वैज्ञानिक और सारगर्भित है जिसमें अनेकशः तात्त्विक सत्य ग्रहण किए जा सकते हैं।

4. महर्षि दयानन्द ने स्वराज्य, स्वदेश और स्वभाषा का शंखनाद सर्वप्रथम किया था। यद्यपि पुनर्जागरण आन्दोलन राजा राममोहन राय द्वारा प्रारम्भ किया गया माना जाता है तथापि स्वदेशीय रूप में उसका उत्कर्ष महर्षि दयानन्द के चिन्तन और उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज के अथक एवं कष्टसाध्य प्रयासों से सम्पन्न हुआ दृष्टिगोचर होता है।

5. महर्षि दयानन्द ने विश्व के सभी मनुष्यों को समान मानकर सबके उत्थान का मार्ग प्रशस्त किया, जिसमें उद्योग, कृषि, गाय इत्यादि स्वरोजगार से संबन्धित विभिन्न विचार उनके पत्रों और ग्रन्थों में देखने को मिलते हैं।

उपर्युक्त बिन्दुओं के संदर्भ में यह अपेक्षित है कि एक वैदिक पार्क (उद्यान) का निर्माण विश्वविद्यालय परिसर में किया जाए, जिसमें एक ओर वैदिक वृक्ष अभिकल्पित हो, जिसमें ईश्वर से निःसृत चारों वेद, वेदांग, छः शास्त्र, उपनिषद्, महाकाव्य इत्यादि का प्रभावी दृष्टि से प्रस्तुतीकरण किया जाए। चारों वेदों के शिक्षा, शिक्षक, मानव-व्यवहार, मानव-मूल्य और मातृभूमि से संबन्धित मन्त्र और उनके अर्थ विभिन्न शिलालेखों या बोर्डों पर उत्कीर्ण करवाये जा सकते हैं। भारतीय संस्कृति और सभ्यता के शिखर पुरुषों, विद्वानों, ऋषियों, चिकित्सकों, वैज्ञानिकों इत्यादि के चित्र और उनका परिचय तथा उनके सिद्धान्त का लेखन कराया जाना भी उचित होगा। उस पार्क में वेदों का सस्वर पाठ, राष्ट्रप्रेम, भक्ति के संगीत, संध्या और हवन के मन्त्र तथा पद्यात्मक हिन्दी में संगीत के साथ उनका उच्चारण प्रातः व सायं किया जाए। इसमें महर्षि दयानन्द के जीवन से संबन्धित प्रकाश एवं ध्वनि **(light and sound)** व्यवस्था के आधार पर डॉक्यूमेन्ट्री एवं उसका प्रस्तुतीकरण भी किया जाए। यह निरन्तर हो; जिससे अजमेर ही नहीं अपितु बाहर से आने वाले पर्यटक भी उसे देख-सुन पाएँ। महर्षि दयानन्द के विचार और उनके कार्यों को उक्त पार्क एवं विश्वविद्यालय परिसर में पदे-पदे अंकित किया जाना उचित होगा।

महर्षि दयानन्द के हस्तलेख, वेदभाष्य, पत्र, पुस्तकें इत्यादि का डिजिटल फॉर्म में विश्वविद्यालय परिसर के एक कक्ष में प्रस्तुतीकरण किया जाए। महर्षि के विषय में विभिन्न विद्वानों, लेखकों, वैज्ञानिकों और राजनीतिज्ञों द्वारा प्रकट किए उद्‌गारों का भी अंकन होना चाहिए।

महर्षि दयानन्द से संबन्धित उपर्युक्त कार्यों को शोधपीठ के अन्तर्गत कार्यशालाओं, परिचर्चाओं, विचार-विमर्श, संवाद के माध्यम से प्रचारित किया जाये। यह सामग्री छोटी-छोटी पुस्तिकाओं के रूप में प्रकाशित कर वितरित की जानी चाहिए। महर्षि दयानन्द और अन्य विद्वानों के विचारों का अन्तर्विषयात्मक (**interdisciplinary**) रूप में तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से बल प्रदान किया जाए तथा शोध समिति की बैठक के मध्य विभिन्न विषयों यथा संस्कृत, हिन्दी, राजनीति शास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, पर्यावरण विज्ञान, भाषा, शिक्षा इत्यादि के शोधविषयों के निर्धारण के समय छात्रों को उक्त विषयों से संबन्धित शोध के विषय वैदिक दृष्टि एवं संदर्भों के साथ सुझाए जाएँ

ताकि वे एतद्विषयक कार्यों में शोध कार्य करें और इस संदर्भ में शोधपीठ उन्हें शोध-ग्रन्थों, शोध-सामग्री, शोध पत्र-पत्रिकाओं इत्यादि का निर्देशन करे, साथ ही शोध की विभिन्न प्रकल्पनाओं के निर्माण, प्राचीन ज्ञान की शाखाओं की पुनर्व्याख्या को सर्वथा नूतन वैज्ञानिक अवधारणाओं के परिप्रेक्ष्य में निरन्तर मूल्यांकित और निरीक्षित कराना, आर्य समाज की पत्र-पत्रिकाओं, उक्त विषयों से संबन्धित सामग्री की उपलब्धता, विशिष्ट कालखण्डों से संबन्धित अध्ययन की सुदीर्घ परम्परा, साक्षात्कार और भेंटवार्ताओं का आयोजन, वैदिक कोष, शब्दशास्त्र और महर्षि दयानन्द से सम्बन्धित विभिन्न कोषों का निर्माण, विभिन्न विषयों से संबन्धित ग्रन्थों की अनुक्रमणिका जिसमें समस्त प्राचीन संस्कृत वाङ्मय उपलब्ध हो, इत्यादि के सृजन के कार्य महर्षि दयानन्द शोधपीठ के माध्यम से संचालित किए जा सकते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय के कुलपति श्रीमान् प्रो. भगीरथ सिंह को साधुवाद कि वे महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों और उनके योगदान को विश्वविद्यालय में साक्षात् परिलक्षित कराने के लिए सन्नद्ध हैं। निश्चय ही उन जैसे शिक्षाविदों की भावनाओं के कारण **महर्षि दयानन्द शोधपीठ** अपने उद्देश्यों को चरितार्थ करने में समर्थ हो सकेगी।

**अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत**

(ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न विषयों की विद्वानों को उसी प्रकार विवेचना करनी चाहिए जैसे पूर्वकाल में विद्वान् एवं ऋषि-महर्षि करते रहे थे)

प्रवचनमाला-९

# बलिवैश्वदेव यज्ञ-१

**प्रवचनकर्त्ता - डॉ. धर्मवीर**

यज्ञ को ऋषियों ने हमारे साथ जोड़कर रखा हुआ है। आदमी जब किस्मत का मारा होता है तो वो एक काम करता हुआ दिखता है, क्या? चींटियों के बिलों पर आटा डालता हुआ, कबूतरों को दाना डालता हुआ। मुसीबत आई और महात्मा जी ने कहा! अरे भाई एक सेर मक्की तू रोज कबूतरों को डाला कर। बड़े प्रेम से डालता है। वैसे तो चींटी को क्यों खिलायेगा? लेकिन गरज पड़े तो चींटी को खिलाता है और हमारे यहाँ पक्षियों के लिए, चींटियों के लिए और तो और ये नये लोगों का तो पता नहीं पर पुराने लोग जब भोजन बनाते थे तो पहली रोटी गाय के लिए और आखिरी कुत्ते के लिये निकालते थे। गाय का और कुत्ते का क्या लेना-देना? आज तो गाय नहीं पालते हैं। कुत्ता तो पालते होंगे, क्योंकि आजकल का शौक है। पर बलि=उसका भाग=उसका हिस्सा क्यों?

आपको याद होना चाहिये कि घर में कोई और भी है, उसका ध्यान तो रखना पड़ेगा। इसलिए हिस्सा बन गया उसका, और तो और भोजन करते समय पुराने आदमी क्या करते थे? एक टुकड़ा निकालते थे, उसका नाम था-गौ ग्रास। गाय प्रतीक है सब जानवरों का। मतलब केवल गाय ही नहीं है। आप कल्पना करो कि गौ ग्रास कितना होता है? प्रश्न मात्रा का नहीं है, प्रश्न अधिकार का है। हम जो कुछ करते हैं, उसमें किस-किसका हिस्सा है, ये हमें पता होना चाहिये। कुछ लोग हैं जिनका हिस्सा आप नहीं दोगे तो वे आकर कहेंगे-ला भाई, हमारा हिस्सा दे। आप भाई को उसका हिस्सा मत दो, भाई तो अपना हिस्सा ले लेगा, माँगकर ले लेगा, लड़कर ले लेगा, मुकदमा करके ले लेगा। कैसे भी ले लेगा। आपसे छीनकर भी ले लेगा। लेकिन कुछ लोग, कुछ प्राणी ऐसे हैं, जो ये काम नहीं कर सकते। ये लोग जो जानवरों को मारते हैं न, पता है क्यों मारते है? क्योंकि उन जानवरों के पास वकील नहीं है, उनके पास भाषा नहीं है, उनके पास हथियार नहीं है, उनके पास कानून नहीं है, उनकी कोई सुनवाई नहीं है। नहीं तो आदमी में और उनमें क्या अन्तर है? आदमी क्यों नहीं मारा जाए? भाई जैसे आप जानवर को खा लेते हैं उतना ही अधिकार जानवर को भी तो है कि आपको खा ले। आपको तो बचने के बहुत सारे साधन हैं और उसके पास अपने को बचाने के साधन नहीं हैं। केवल इतनी सी बात है कि आप उन्हें खा लेते हो और अपने को उनसे बचा लेते हो। अधिकार तो पशुओं का ज्यादा कानूनी है कि वो आपको खा लें पर आपका नहीं है। उनका तो प्राकृतिक भोजन हैं आप, आपका वो प्राकृतिक भोजन नहीं हैं आप जबरदस्ती खा रहे हो।

समाज में, संसार में सन्तुलन के बिना काम नहीं चलता। कोई भी एक तरफ चला जाएगा तो दूसरा बिगड़ जाएगा। आप एक कल्पना करो कि आप ज्यादा दोहन कर लो प्रकृति का, कर लो, मान लो समाप्त ही कर दो। फिर क्या होगा? अगली पीढ़ी मर जाएगी। फिर अगर आपसे पहली पीढ़ी के ही लोग आपको मार देते तो? वो ज्यादा अच्छा था। उन्होंने बेकार ही हम तक अच्छी चीजें रहने दीं। इसलिए हमारे प्रयोग करने के साथ-साथ हमको ये भी सोचना है कि आज से सौ साल, हजार साल के बाद भी इस धरती पर लोग होंगे और वो हमारी ही संतान

होंगे, हम जैसे ही होंगे। वो भी परमेश्वर की ही प्रजा होंगे तो उनका अधिकार समाप्त थोड़े ही हो गया है? उनका अधिकार तो बना हुआ है ना। इसलिये आपके पास वस्तु को समाप्त करने, नष्ट करने का अधिकार नहीं है। आपको केवल उपयोग करने का अधिकार है। भगवान् ने आपको भेजा है और दिया है तो उपयोग करने के लिये दिया है। आपकी आवश्यकता जितनी है, आप उतना उपयोग कर सकते हो। लेकिन आप संग्रह करें या खराब करें वो उचित नहीं है, वो पाप है, अपराध है। हमारे ऋषियों ने पूरे समाज में, व्यक्ति में, परिवार में सन्तुलन बनाने के उपाय किये। स्वामी दयानन्द ने एक सुन्दर बात लिखी है 'गोकरुणानिधि' में। वहाँ लिखा है, भगवान्! क्या तेरे दरवाजे इनके लिए बन्द हो गये हैं? क्या इनकी आवाज तेरे कानों तक पहुँच नहीं रही है? वहाँ जो करुणा ऋषि के हृदय की है उसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते।

हमको ये सोचना है कि ये सब मेरे लिए तो हैं, लेकिन मैं भी तो सब के लिए हूँ, तब बात बनेगी। सब मेरे लिए हैं और मैं किसी के लिए नहीं हूँ, इससे तो बात नहीं बनती। ऋषियों ने हमारे जीवन में मानसिक और भौतिक दोनों संतुलन बनाने का उपाय किया है। उस सन्तुलन में **बलिवैश्वदेव यज्ञ** बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इसके बारे में हम सोचते नहीं हैं। सोचते नहीं हैं इसलिए अपराध, पाप ज्यादा करते हैं। यदि सोचने लगेंगे तो नहीं करेंगे। हम ये समझते हैं कि कबूतर को दाना डालने से पुण्य होता है। तो क्या दूसरे जानवर को दाना डालने से पाप होता है? नहीं। वो तो एक प्रतीक है कि जो उपलब्ध है उसकी जिम्मेदारी हमारी है और जो जंगल में रहता है उसकी जिम्मेदारी हमारी नहीं है। जंगल उसका है वो जंगल के हैं। वो किससे अपने को बचाते हैं और किससे वो मारे जाते हैं, उसकी जिम्मेदारी हमारी नहीं है। लेकिन हमने जिनके गले में रस्सी बाँधकर अपने खूँटे पर बाँध रखा है, उनकी जिम्मेदारी हमारी है। यही तो बलिवैश्वदेव यज्ञ है।

जो बहुत हिंसक लोग हैं यूरोप, अमेरिका वाले, इनके यहाँ दया की बात तो करते हैं और कमाल ये करते हैं इस पर तो कोर्ट में चले जायेंगे कि प्राणी के साथ हिंसा न की जाये और गाय को मार के खा रहे हैं। आपको आश्चर्य होगा, अमेरिका में एक जगह कई हजार गायें खड़ी थीं तो मुझे अच्छा लगा, मैंने कहा यहाँ गायें बहुत हैं। मेरी बेटी कहने लगी, ये सब मांस के लिए हैं, इनमें एक भी दूध के लिए नहीं है। पिछले दिनों परोपकारी में हमने तीन चित्र छापे। उसकी प्रेरणा मुझे कहाँ से मिली? लॉस एंजेलिस (अमेरिका) के पास समुद्र के किनारे बंगला है किसी बड़े व्यक्ति का। वो मर गया तो उसका संग्रहालय बना दिया। उसके पास पहाड़ में हजारों एकड़ जमीन है। वहाँ गायें चरती हैं। उन गायों को देखकर आपको लगेगा कि वो महाशय श्रीकृष्ण के अवतार हैं। लेकिन ऐसा नहीं है। उनके रेस्टोरेन्ट में एक बड़ा सा चित्र लगा हुआ था और उसमें गाय बनी हुई थी, गाय पर निशान लगे हुए थे कि गाय के कौन से हिस्से से कौन सा बिस्कुट बनता है, कौन सी चॉकलेट बनती है, कौन सी आइस्क्रीम में पड़ता है और वहाँ लिखा था कि अमेरिका में सबसे अच्छा गाय का मांस यहाँ का माना जाता है, क्योंकि ये पहाड़ पर चरने वाली गाय का होता है। इसको देखकर मैंने अपनी कल्पना में तीन चित्र इकट्ठे किये। तीन चित्र बनाये। **एक** चित्र तो वहाँ से लाया कि कौन से हिस्से से क्या बनता है? **दूसरा** एक पौराणिक चित्र है कि गाय में किन देवताओं का वास है और फिर **तीसरा** हमने देखा कि वेद गाय के बारे में क्या कहता है? पिछले एक-दो अंक पहले देखना उसमें गाय के बारे में हमारी दृष्टि। गाय के बारे में पौराणिक दृष्टि, गाय के बारे में वैदिक दृष्टि और गाय के बारे में पाश्चात्य लोगों की दृष्टि। उस अमेरिका के चित्र में इतनी सारी चीजें थीं तो मैंने अपनी बेटी से कहा कि इसकी हिन्दी तो कर दे। वो बोली कि आपके यहाँ ये चीजें बनती ही नहीं तो हिन्दी किसकी कर दूँ? गाय के मांस से, हड्डी से, अलग-अलग हिस्सों से कौन सी चीज बनाकर बेची जाती है, वो तो जहाँ बनती है और जहाँ के लोग खाते हैं वही जानते हैं। हमारे यहाँ तो उसकी कल्पना भी नहीं हो सकती। मैंने कहा ठीक है, जैसा है वैसा लिख दे। अब एक तरफ तो कुत्ते को मारने में आप कोर्ट कचहरी तक जाते हो और गाय को दुकान में ही काटकर बाँट लेते हो। एक तरफ तो इतने दयावान् हो और दूसरी तरफ कतई नहीं लग रहा है कि हिंसा भी हो रही है या किसी को कष्ट भी हो रहा है। ये सोच, सोच नहीं अधूरी सोच है। अज्ञान की सोच है।

मैं एक दिन मेरठ में थापर नगर आर्य समाज में व्याख्यान दे रहा था। एक लड़का खड़ा हो गया। बोला, जी आप मांस खाते हो। मैंने पूछा, कैसे? वो बोला, आप दूध पीते हो इसलिये नॉनवेज हो। नॉनवेज की परिभाषा होती है कि जो जानवर से मिला वो नॉनवेज है, इसलिये आपका घी, दूध सब नॉनवेज है। वैसे वेज-नॉनवेज की परिभाषा ही हमारी नहीं है। इसका जवाब क्या है हमारे पास? हमारी परिभाषा है शाकाहार और मांसाहार। मांसाहार वो है जिसे किसी को कष्ट देकर, हिंसा करके प्राप्त किया जाये और जो तमोगुण पैदा करने वाला होता है। तमोगुण तो दूसरी चीजों से भी हो सकता है, लेकिन किसी की हिंसा करके, किसी को कष्ट दे के जो चीज आप प्राप्त करते

हो वा मांसाहार है और जो सात्विक है, बिना कष्ट दिये पाया जाता है, वो शाकाहार है। फिर उसने एक सवाल और पूछा। बोला, दूध तो गाय के बछड़े के लिए है, आप तो उसका हिस्सा लेते हो, ये अन्याय है। मैंने कहा, निश्चित लेते हैं, उसका हिस्सा ही लेते हैं, तो क्या ये अन्याय है? नहीं। ये सौदा है, बँटवारा है, आपस का समझौता है। मैंने कहा- देखो, हमारे यहाँ बुद्धि से नहीं, भावना से चलते हैं। तुम बुद्धि से चलते हो। गाय ने दूध देना बंद किया तो कसाईखाने में बेच दिया। तो क्या तुमको अपने माँ-बाप के साथ भी यही करना है। माँ-बाप से तुम्हारा काम खत्म, तो अब जाओ अपने घर। हमारे यहाँ ऐसा नहीं है। आज लोग बैल नहीं रखते हैं, इसलिये बूढ़ा होने पर कसाई को बेच देते हैं। पुराने समय में घर में यदि बैल बूढ़ा हो जाता था तो कोई बेचता नहीं था। कहते थे, बाप की तरह बैल होता है। जीवन भर इसने हमको दिया है, अब ये थोड़ा खा लेगा तो हमारा उपकार ही है। पर हम आज बुद्धि से चलने लग गये, भावना से नहीं चलते। हमको कोई भी बात जो लाभदायक नहीं लगती, उसे खत्म करने की इच्छा होती है और जब ये प्रवृत्ति पनपने लगती है तो फिर वो ये नहीं देखती कि सामने बाप है या बेटा? बिना फायदे की चीज घर में रखनी नहीं। बाप हो तो भी नहीं रखनी, बेटा हो तो भी नहीं रखनी। एक सज्जन उज्जैन के रहने वाले हैं, इन्जीनियर हैं, उनके दो बच्चे हैं। एक बच्चा अमेरिका में है और एक बच्चा इन्दौर में है। जो अमेरिका में था उसने माँ-बाप को अपने पास बुला लिया। माँ-बाप खुशी से रहते थे। उसके बच्चे हो गये बड़े तो एक दिन बेटा बाप से बोला- पिता जी, अब हमारे घर में जगह नहीं है, बच्चों के लिये कमरा चाहिये तो आप ऐसा करो कि आप भारत चले जाओ। आप अपने देश लौट जाओ। क्यों? अब जरुरत नहीं रही। बच्चे छोटे थे तो दोनों माँ-बाप नौकरी करते थे। बच्चों को सम्भालने वाला नौकर तो चाहिए ना। नौकर महंगा भी पड़ता है और भरोसे का भी नहीं होता है। माँ-बाप ऐसे नौकर हैं जो बिना खर्चे के मिलते हैं, और भरोसे के लायक भी होते हैं। बच्चे बड़े हो गये तो अब जरुरत नहीं रही। क्या करना इनकी सेवा करके? बेचारे क्या करते, लौट आये। उन्होंने सोचा, चलो छोटा बेटा हमारा अच्छा है, इन्दौर में उसके पास रह लेते हैं। रहे दो-चार महीने। एक दिन बेटा बोला- पिता जी, जब से आप आये हो बच्चे पढ़ते नहीं हैं। बच्चों का मन पढ़ने में नहीं लगता, ऐसे तो बच्चे बिगड़ जायेंगे। आप उज्जैन चले जाओ।

ये हमारी परिस्थिति तब बनती है जब हम केवल हानि-लाभ पर बात करते हैं। ज्यादा गणित लगाने में यही परिणाम होता है। गाय मुफ्त में खा रही है, दूध देती नहीं है तो बेच दो। बेच तो दो, लेकिन जिस दिन तुम्हारे माँ-बाप फायदा नहीं देंगे, उस दिन क्या उनको भी बेच दोगे? बेचने की तुम्हारी आदत बन गई है ना। तुम्हारा पैमाना हानि-लाभ का बन गया। जब पैमाना हानि-लाभ का बन गया तो उसमें चाहे बाप हो चाहे बेटा हो। इसलिए गाय से दूध हम पीते हैं तो ये तो ठीक है कि वो दूध गाय के बछड़े के लिए है, पर आजकल दूध उनका इतना बढ़ा दिया है कि बछड़ा पीयेगा तो शायद बीमार हो जाये। हमारे यहाँ जो कुछ सम्बन्ध है वो एक-दूसरे पर निर्भर है। हम कुछ गाय-बछड़े के लिये करते हैं कुछ बछड़ा हमारे लिये छोड़ता है, कुछ गाय हमें देती है। हम दोनों एक-दूसरे पर निर्भर होकर काम करते हैं। एक नियम याद रखो, दुनिया में किसी को भी बिना कष्ट दिये कोई भी जीवित नहीं रह सकता। आप कल्पना करके देख लो। एक मनुष्य का छोटा बच्चा है, वो ये सोचे कि किसी को कष्ट न दे और बच जाए, ऐसा हो सकता है? माँ स्वार्थवश उस कष्ट को उठाती है, मोहवश उठाती है, उतना कष्ट किसी और के लिये उठाना पड़े तो कोई भी नहीं उठाता, हम वो कष्ट इसलिये उठाते हैं कि जब हम असमर्थ हो जायेंगे तब वो हमारी सहायता करेंगे। परस्पर दु:ख दिये बिना सुख पाया नहीं जा सकता। यह सारे संसार का नियम है। जब मैं कुछ देता हूँ तब मुझे कुछ छोड़ना तो पड़ेगा। जब मैं किसी से लेता हूँ तो उससे छुड़वाना भी पड़ेगा। मैं देकर के प्रसन्न रहूँ और दूसरा भी मुझे देकर प्रसन्न रहे, ऐसा सम्बन्ध बनाना है। वो सम्बन्ध भावात्मक हो, तो फिर बुद्धि से नहीं चलता। एक भला आदमी दिल्ली में उतरा तो एक रिक्शा वाले से बोला, खारी बावली जाना है। दो लोग थे। उतर के गाँव वाले आदमी ने दोनों के पैसे दिये। दस रुपये लगे दोनों के। फिर वहाँ से आगे जाना था तो स्वाभाविक रूप से अगले पैसे दूसरे ने दे दिये। लेकिन पहले वाला खुश था क्योंकि उसको तो दस देने पड़े थे और यहाँ सोलह लगे। ये जो सोच है, ये भावना पर नहीं टिकती। भावना में गणित नहीं चलता। भावना में सन्तुष्टि चलती है। ऐसा करके अच्छा लगता है। आदमी अच्छे को नापता नहीं है, अच्छा लगता है इसलिये करता है। यदि सारे काम गणित से हों तो कोई किसी के लिये कुछ नहीं कर सकता। एक महिला रसोई में, गर्मी में रोटी बनाती है नापने लगो कि कितना कष्ट उठाया है फिर तो आपको खाना ही नहीं मिले। माँ इसलिये कष्ट उठाती है कि उसके साथ भावना जुड़ी हुई है, सम्बन्ध बना हुआ है, उसमें गणित नहीं चलता, सन्तुष्टि चलती है। माँ कहती है कि मुझे बनाकर खिलाना अच्छा लगता है। हमें लगता है कि बड़ा कष्ट उठा रही है परन्तु कष्ट, कष्ट तब नहीं होता जब अच्छा लगता है।

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

# योग–साधना शिविर

## दिनांक : ८ से १५ अक्टूबर २०१७

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान-विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही हैं। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग-साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

### प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा- खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।

१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

**प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ**-मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

: मार्ग :

**ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से ( वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा ) सर्वदा सुलभ रहते हैं।**

email:psabhaa@gmail.com **-संयोजक**

## लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

# कुछ तड़प–कुछ झड़प

**प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'**

**एक गम्भीर प्रश्न**– किसी विधर्मी की एक पुस्तक में उठाये गये प्रश्न को नये ढंग से एक प्रेमी ने हमारे सामने रखा है। ईश्वर का ज्ञान पहले होता है अथवा कर्म। यह प्रश्न मत–पन्थों के लिये उलझाने वाली गुत्थी होगी। वैदिक धर्म इसका सहज समाधान करता है। ऋषि ने बार–बार लिखा है और कहा भी है कि ईश्वर के गुण, कर्म तथा स्वभाव अनादि हैं। अनादि ईश्वर का ज्ञान भी अनादि है। यह सृष्टि भी प्रवाह से अनादि है। ज्ञान व कर्म का आगा–पीछा प्रकृति व जीवन को उत्पन्न हुआ मानने वालों की समस्या है। वैदिक धर्म के लिये यह उलझन नहीं है।

**वेदज्ञान आदि सृष्टि में कैसे?**– इस प्रश्न का उत्तर हम कई बार दे चुके हैं। सृष्टि का अटल नियम यही है 'आविष्कार' पहले होता है और आवश्यकता बाद में होती है। प्यास के पश्चात् जल को प्रभु नहीं बनाता। आँखों वालों से पहले सूर्य बनाया गया। पशु, पक्षियों व मनुष्यों से पूर्व प्रभु ने पेड़, पौधे और उद्यान उगाये। यह बाईबल भी मानता है कि पृथ्वी पहले बनी, प्राणी जगत् बाद में उत्पन्न हुआ। भूख लगने से पहले भोजन की सामग्री बनाई गई फिर मानवीय जिज्ञासा Instinct of curiosity की जन्मन: प्रवृत्ति से पूर्व ज्ञान का आविर्भाव क्यों नहीं? प्रत्येक पदार्थ के उपयोग–प्रयोग के ज्ञान के प्रदान किये बिना प्रभु ने यह विशाल सृष्टि क्यों बनाई? यह सम्भव ही नहीं।

**याद रखिये वह कर्म किस काम का जो ज्ञानपूर्वक न किया जाये और वह ज्ञान किस काम का जो कर्म का रूप धारण न करे।** ईश्वर के इस विधि–विधान को समझिये, वेद के आविर्भाव का वैदिक सिद्धान्त समझ में आ जायेगा।

यह ठीक है कि मनुष्य–सृष्टि का यही नियम है कि मनुष्य आवश्यकता पड़ने पर आविष्कार करता है। उड़ने की इच्छा हुई तो वायुयान का आविष्कार किया गया। काँटे चुभे तो जूता बनाया। धूप से बचने के लिये छाते का आविष्कार हुआ। तीव्र गति से यात्रा की इच्छा से राजधानी ट्रेनें आ गईं।

**यह मुद्रण दोष समझा जाये**– परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित महर्षि के पत्र–व्यवहार के भाग–२ के पृष्ठ ७ पर पाद टिप्पणी में छप गया, ''वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरांवाला सन् १९०८ से अनूदित किया गया।'' स्वाध्यायप्रेमी प्रश्नकर्त्ता बन्धु का प्रश्न ठीक है कि यत्र पत्र गुरुकुल काँगड़ी से ही छपता था। मुद्रण दोष अथवा प्रूफ पढ़ने की चूक से ऐसा छप गया। वास्तव में यह पत्र गुजरांवाला भेजा गया था।

**धर्म-प्रचार, समाज सेवा के लिये स्मरणीय आर्य डॉक्टर**– बेगूसराय के मान्य डॉ. अशोक जी गुप्त के अनुरोध से और आर्य चिकित्सकों की जानकारी दी जाती है। बिहार के जाने–माने आर्य नेता और राष्ट्रपति के डॉक्टर रहे गुणों की खान, विनय की प्रतिमा, प्रेमल, धर्मानुरागी ऋषि भक्त डॉ. दुखनराम जी की योग्यता, सेवाओं व पावन चरित को सब जानते हैं।

अमरीका में वैदिक धर्मप्रचार की धूम मचाने वाले और वहाँ पं. गुरुदत्त जी का साहित्य रटकर जन–जन को प्रभावित करने वाले **जेंदाराम जी मुजफ्फरगढ़ ( पंजाब ) के श्रीमान् सिद्धूराम का** साथ लेकर एक शिप कम्पनी में क्लर्क भरती होकर अमरीका में प्रचार की प्यास बुझाने गये। 'सद्धर्म प्रचारक' की फाइलों में उनके कार्य के कई समाचार मिलते हैं। वहीं से बिजली से चिकित्सा करना सीखकर आये थे फिर मुल्तान में यही कार्य करते रहे। मेहता जैमिनी जी हमें उनकी कहानियाँ सुनाया करते थे।

**श्री अशोक आर्य शोलापुर**– वह शोलापुर के सबसे बड़े प्रेस 'आर्य प्रेस' को चलाते थे। होम्योपैथी के विशेषज्ञ थे। वह रविवार को नि:शुल्क रोगियों की सेवा किया करते थे। सब्जी मण्डी में बाजार में छोटे–छोटे बच्चे माओं के साथ उन्हें देखकर 'मीठी गोलियों वाला बाबा' कहकर आदर दिया करते थे।

**महर्षि पर घिनौना प्रहार**– जोधपुर के एक बड़े सेवानिवृत्त राजस्थानी अधिकारी का राजस्थानी भाषा में छपा एक लेख किसी आर्य ने सीधा या धर्मवीर जी द्वारा

हमारे पास उत्तर देने के लिये भेजा था। हम इसे रखकर भूल गये। हमें कुछ-कुछ याद है कि यही लेख राजस्थान पत्रिका में भी छपा था। उस लेखक ने राजपरिवार सेवा के प्रयोजन से ऋषि के विषपान बलिदान की घटना को झुठलाने का अच्छा व्यायाम किया। हम सम्पूर्ण जीवन-चरित्र में अनेक दस्तावेजी प्रमाणों से इन कुतर्कों का प्रतिवाद कर चुके हैं तथापि आर्य भाई को निराश नहीं करते। उस लेख की शव-परीक्षा क्रमशः कर देते हैं।

१. ऋषि ने कर्नल प्रताप सिंह को या प्रशासन को विष दिये जाने की शिकायत क्यों न की? हमारा उत्तर है ऋषि पर कर्णसिंह ने तलवार का वार किया, कहीं टांग तोड़ी गई, काशी में कोबरा फेंका गया, मुम्बई में विष देने का षड़यन्त्र रचा गया। ऐसे वार प्रहार कहाँ नहीं किये गये? ऋषि ने क्या किसी के विरुद्ध कहीं भी F.I.R.(प्राथमिकी) लिखवाई?

२. गोपाल राव हरि देशमुख ने अपनी पुस्तक में इसका उल्लेख नहीं किया। यह कोई तर्क या प्रमाण नहीं है। गोपालराव सरकारी सेवा में था, वह सरकार के प्रिय राजपरिवार की पोल खुलने वाली घटनायें देने का साहस कहाँ से लाता। उसने ऐसी एक भी घटना दी क्या?

३. सर नाहरसिंह ने अपने दिये पाचक का गुणगान करते हुये इस कथन (विष देने) का प्रतिवाद किया था। महर्षि का सर नाहरसिंह के नाम पत्र आंखें खोलकर पढ़िये। महर्षि तो शाहपुरा से साथ दिये गये सब नौकरों को निकम्मा और छलिया लिखते हैं।

४. उस काल के राजस्थान के सबसे बड़े इतिहासकार गौरी शंकर ओझा (महर्षि के एक से अधिक बार दर्शन किये) ने स्पष्ट लिखा है कि विष दिया गया।

५. सर प्रताप सिंह की आत्मकथा तथा छोटी-बड़ी और जीवनियों में तो महर्षि की जोधपुर यात्रा पर भी दो चार पृष्ठ नहीं तो क्या यह मान लें कि ऋषि जोधपुर गये ही नहीं? प्रताप सिंह ने स्वयं स्वीकार किया कि ऋषि को जोधपुर में विष दिया गया। क्या इसका प्रमाण हम दिखा दें? प्रताप सिंह या राजपरिवार का एक भी व्यक्ति महर्षि का पता करने नहीं पहुँचा। इतने क्रूर कुल की वकालत करके उसकी पोल खुलवाना चाहते हो? प्रतीक्षा कीजिये! हम सब सेवा कर देंगे। पाप पर पर्दा डालने से आपको क्या मिलेगा?

**स्वामी श्रद्धानन्द जी की शूरता एक अकथित कहानी**- स्वामी श्रद्धानन्द जी की शूरता-वीरता की उन राजनेताओं को भी प्रशंसा करनी पड़ी, जिन्हें उनसे ईर्ष्या थी। उनकी शूरता पर बहुत कुछ लिखा गया है। तथापि अभी तक उनकी शूरता की कई कहानियाँ अकथित हैं। सहस्रों वर्षों के पश्चात् देश-जाति को प्राणों का निर्मोही एक ऐसा महाप्रतापी मुनि महात्मा और सेनानी मिला। देश में आज भी पराधीनता का युग समाप्त होने पर स्वामी श्रद्धानन्द जी के यश व शूरता के ईर्ष्यालु तत्त्वों के कारण स्वाधीनता संग्राम के इतिहास के गौरवपूर्ण प्रसंगों, उनकी चर्चा को दबाया जाता है। पन्द्रह अगस्त को लालकिले से कभी चाँदनी चौक के घण्टाघर में संगीनों से सीना अड़ाने का प्रसंग किसी ने सुनाया?

इस प्रसंग का एक पक्ष तो अब तक भी देशवासियों के सामने नहीं आया। श्री डॉ. सत्यपाल सिंह जी आर्य जब महाराष्ट्र में पुलिस विभाग में थे तब आपकी भेंट वहाँ के एक जाने-पहचाने महात्मा से हुई। उन्हें पता चला कि आप बड़ौत जिला बागपत से हैं। तब उन्होंने सत्यापाल जी को बताया कि आपके क्षेत्र के तो आठ-दस साहसी देशभक्त सैनिकों को जनता पर गोली चलाने से इनकार करने पर कालेपानी का दण्ड दिया गया। उन वीर सपूतों ने चाँदनी चौक में स्वामी श्रद्धानन्द को सामने छाती ताने देखा तो सरकार की आज्ञा मानने से इनकार कर दिया था। इस घटना की जाँच करवाकर सरकार उन देशभक्त सैनिकों के नाम का, परिवार का अता-पता कर सकती है। उस वृद्ध महात्मा का तो मिथ्या कथन से कोई स्वार्थ सिद्ध होने वाला नहीं था।

उस सुपठित पुराने महात्मा ने तो देशहित में जो देखा सुना, सो बता दिया। कालेपानी बन्दियों में बड़ौत के सैनिकों का अता-पता चल सकता है। उनके अपराध का दोष का पता लगाना फिर कोई कठिन नहीं इस कथन को हल्के में नहीं लेना चाहिये।

**एक मिथ्या कहानी की शव-परीक्षा**- श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की संन्यास-दीक्षा शताब्दी के अवसर

पर उनके सम्बन्ध में प्रचारित की गई एक मनगढ़न्त कहानी की शव-परीक्षा करना हम अपना कर्त्तव्य समझते हैं। आर्य समाज के जन्मकाल से ही सरकार के कुछ भेदिये आर्यसमाज में घुसपैठ करके समाज को कई प्रकार से हानि पहुँचाते रहे। लाला लाजपतराय जी ने ऐसा स्पष्ट लिखा है। ऐसे लोग आर्यसमाज में विघटन व आर्यसमाज की अपकीर्ति का कारण बने।

सन् १९७६ में 'जनज्ञान अंग्रेजी मासिक' की लोकप्रियता का लाभ उठाकर प्रिं. श्रीराम शर्मा ने उसमें अपना एक लेख छपवाने में चतुराई दिखाई। तब हमने 'आर्य मर्यादा' साप्ताहिक के स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान विशेषाङ्क में इसका प्रतिवाद करते हुए लिखा था कि श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी ने महात्मा मुंशीराम के रूप में सन् १९०७ में पंजाब के तत्कालीन गवर्नर से कतई भेंट नहीं की थी। **महात्मा जी तो तब कालका गये ही नहीं थे।** हमने अपने लेख में लिखा था, ''कालका में कुछ और रायसाहब लोगों की कलङ्कपूर्ण घटना को स्वामी श्रद्धानन्द जी से जोड़ना बड़ा घृणित काम है।''

इस लेख के लेखक प्रिं. श्रीराम शर्मा ने विशुद्ध दुर्भावना से बड़ी चतुराई से श्री भारतेन्द्रनाथ जी के कन्धे पर रखकर अपनी बन्दूक चलाई। इसी व्यक्ति ने इससे पहले दिल्ली विश्वविद्यालय में एक भाषण The Arya Samaj and Its Impact on Contemporary India नाम से पुस्तिका रूप में छपवाया था। उस पुस्तिका में श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी, हुतात्मा श्यामभाई, श्री पं. नरेन्द्र जी आदि एक भी बलिदानी आर्य नेता का नामोल्लेख नहीं। जबकि यह लेखक हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के स्मारक रूप बने डी.ए.वी.कॉलेज में लम्बे समय तक प्रिंसिपल रहा।

वैद्य गुरुदत्त जी ने तो अज्ञानवश सुन-सुनाकर कालका में महात्मा मुंशीराम जी की गवर्नर से भेंट का उल्लेख अपनी आत्मकथा में कर दिया था। उनके पौत्र ने हमें कहा आप हमें लिख भेजें, हम भूल सुधार कर देंगे। इस शताब्दी पर आर्य जनता ऐसे सब प्रकार के दुष्प्रचार का प्रतिकार करे, तभी शताब्दी मनाने का पूरा लाभ होगा।

**स्व. स्वामी सच्चिदानन्द जी ब्यावर**- भरतपुर के स्नेह सम्मेलन तथा यज्ञ-शिविर आदि कार्यक्रमों का एक विशेष लाभ यह रहा कि हम आर्य समाज की नींव के एक पत्थर, वयोवृद्ध संन्यासी, शुद्धि आन्दोलन के एक योद्धा १०७ वर्षीय संन्यासी स्वामी सच्चिदानन्द जी ब्यावर के आरम्भिक जीवन की गुत्थी सुलझा पाए। एक लम्बे समय से श्री ओममुनि इस कार्य में जुटे थे। पुराने पत्रों में सामग्री की खोज में मैं भी लगा था। इतना पता था कि वह भरतपुर राज्य के निवासी थे।

श्रीयुत् लक्ष्मणजी 'जिज्ञासु' तथा पं. रामनिवास 'गुणग्राहक' भी भरतपुर के हैं। इनके भरपूर सहयोग से अत्यावश्यक वाञ्छित जानकारी मिल गई। स्वामी जी गुणग्राहक जी के ग्राम के समीप ही जन्मे थे। उनकी जन्मतिथि वहाँ एक शिला पर लिखी मिल गई। उससे यह पता चला कि मृत्यु के समय वह १०७ वर्ष के थे। श्रीमान् साधक जी तथा ओममुनि जी तो अनुमान से उन्हें एक सौ वर्ष के आसपास समझते रहे।

सन् १९३५ में आपको ब्यावर वालों की विनती पर शुद्धि-सभा ने इस क्षेत्र में भेजा था। तब शुद्धि-सभा के कर्णधार महात्मा नारायण स्वामी तथा स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज थे। दोनों का ब्यावर वालों से सम्बन्ध था। सेठ जुगलकिशोर बिड़ला शुद्धि-सभा से जुड़े थे। उनसे स्वामी जी को कुछ राशि प्रतिमास प्राप्त होती थी। ओममुनि जी का मत है कि श्री घनश्याम सिंह बिड़ला से आती होगी। शुद्धि-सभा के कार्यवाही रजिस्टर तथा सभा के मासिक पत्र के आर-पार जाने से बहुत कुछ पता चलेगा। दो मास के पश्चात् सेवक ये फाइलें खंगालेगा।

**अंग्रेज क्यों दुःखी थे?**- बड़ा प्रश्न हमारे सामने यह पता लगाना है कि अंग्रेज सरकार या गोराशाही को हमारे इस संन्यासी से क्या कष्ट पहुँच रहा था। स्वामी जी जाट कुल में जन्मे थे। भरतपुर एक जाट राज्य था। स्वामी जी को महामान्यवर की उपाधि प्राप्त थी। दरबार में उनका स्थान था। अंग्रेजों ने महाराजा को उन्हें राज्य से बहिष्कृत करने का इतना दबाव क्यों बनाया? महाराजा अड़ गया कि हम अपने 'महामान्यवर' को क्यों बहिष्कृत करें। स्वामी जी ने दूरदर्शिता दिखाई और कहा, ''तुम अंग्रेज से टक्कर नहीं ले पाओगे।'' वह आप ही राज्य से निकल गये।

प्रश्न तो अब यह है कि इस संन्यासी ने ऐसा क्या

किया जो वह अंग्रेज की आँख का काँटा बन गये। देश में सत्याग्रह करके लोग जेलों में गये, फिर वीर भगतसिंह की टोली फांसी पर झूल गई। उनके फांसी चढ़ने से पूर्व उनकी भूख हड़ताल के समय उनके समर्थन में एक गर्मागर्म भारी सभा हुई। जिसके अध्यक्ष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी थे। कोई गांधीवादी अहिंसक भगतसिंह के लिये सभा का अध्यक्ष बनने का दु:साहस कैसे करता? उस अध्यक्षीय भाषण को सुनकर सरकार चौंक पड़ी। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी बन्दी बनाये गये। उन पर पंजाब के गवर्नर की हत्या का षड्यन्त्र रचने का दोष लगाकर केस चलाया गया। यह एक लम्बा इतिहास है। **वे पहले संन्यासी थे जिन पर यह दोष लगाया गया** और सब तथ्य फाइलों से सामने आयेंगे।

हमारा कोई संन्यासी जातिवादी सोच का नहीं था। न पूज्य नारायण स्वामी, न रामानन्द जी, न चिदानन्द जी, न स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी। शरारती अंग्रेज की गुप्तचर लीला ने उन्हें यह सूचना दी। भरतपुर स्टेट जाट राज्य, सच्चिदानन्द स्वामी जाट कुल में जन्मे और लो! यह कौनसा गुप्त भेद था कि महात्मा स्वतन्त्रानन्द जी भी वीर भगतसिंह के ही गोत्र के जाट परिवार में जन्मे हैं। सो मलकाना राजपूतों की शुद्धि के आन्दोलन में स्वामी श्रद्धानन्द अंग्रेज की आँखों में काँटा बनकर चुभने लगा। आगे का इतिहास आगे देंगे। अंग्रेज का गुप्तचर विभाग स्वामी श्रद्धानन्द जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज से श्री स्वामी सच्चिदानन्द की निकटता की जानकारी सरकार को देता रहा। इससे सरकार बिदक गई। उसी काल खण्ड में स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी पंजाब कांग्रेस के कार्यकारी प्रधान रहे। आपने पंजाब में कांग्रेस के सत्याग्रह के सर्वाधिकारी भी गोपनीय रीति से नियत किये। पं. नरेन्द्र जैसे क्रान्तिकारी शिष्य से लाहौर में पहला सत्याग्रह करवाया। सच्चिदानन्द जी इसी पृष्ठभूमि में कोपभाजन बने।

---

जो विद्या की वृद्धि के लिए पठन-पाठन रूप यज्ञ कर्म्म करने वाला मनुष्य है वह अपने यज्ञ के अनुष्ठान से सब की पुष्टि तथा संतोष करने वाला होता है इस से ऐसा प्रयत्न सब मनुष्यों को करना उचित है।

**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२७**

## ऋषि मेला २०१७ हेतु स्टॉल आवंटन

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष ऋषि मेला २७, २८, २९ अक्टूबर शुक्र, शनि, रविवार २०१७ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्य जगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की स्टॉल लगती हैं। प्रति स्टॉल किराया १००० रु. निर्धारित है। जिसकी राशि पहले जमा होगी उसी क्रम से स्टॉल का आवंटन होगा। जिन महानुभावों को जितनी स्टॉल की आवश्यकता है, उसी अनुरूप राशि बैंक ड्राफ्ट द्वारा या नकद जमा करावें।

**स्टॉल सुविधा:-** कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाइट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज-** ७.५×१५ फीट।

**ध्यातव्य- १.** स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर-उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टैन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर, रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक से स्टॉल संख्या, राशि की रसीद दिखाकर प्राप्त करें। बिना पूर्व अनुमति के स्टॉल में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें। ६. अपना मोबाइल (चलभाष) नवम्बर देना अति आवश्यक है। ७. आप अपना स्थाई पता अवश्य देवें। ८. स्टॉल में आप पुस्तकें/दवाइयाँ/अन्य सामग्री का उल्लेख अवश्य करें। ९. स्टॉल आवंटन हेतु अग्रिम राशि जमा करावें, अन्यथा विचार सम्भव नहीं होगा। १०. एक पासपोर्ट फोटो भिजवावें, जो परिचय पत्र के साथ अंकित हो। उसमें स्टॉल आवंटन संख्या भी अंकित किया जाएगा। ११. स्टॉल आवंटन की सूचना निर्धारित अवधि में दी जायेगी।

# परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में
# १३४ वाँ ऋषि बलिदान समारोह

## दिनांक २७, २८, २९ अक्टूबर २०१७, शुक्र, शनि, रविवार

महापुरुषों का यज्ञमय जीवन हमको प्रत्येक कदम पर प्रेरणा व मार्गदर्शन देता रहता है, जिस कारण हम उनके ऋणी हो जाते हैं। इस ऋण से मुक्त होने का एक ही उपाय है- महापुरुषों की विचारधारा का यथासामर्थ्य प्रचार-प्रसार। विराट व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण को चुकाने का स्वर्ण-अवसर ऋषि के १३४वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है।

**ऋग्वेद पारायण यज्ञ**- 'ऋग्वेद पारायण यज्ञ' की पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन २९ अक्टूबर को प्रात: १० बजे होगी। यज्ञ के ब्रह्मा **श्री सत्यानन्द वेदवागीश** होंगे। यह यज्ञ ऋषि-उद्यान अजमेर की यज्ञशाला में सम्पन्न होगा।

**वेदगोष्ठी** - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ दिल्ली एवं अनुसन्धान केन्द्र परोपकारिणी सभा के संयुक्त प्रयास से वेदगोष्ठी का आयोजन किया जायेगा। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त**। जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे १५ अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। २७, २८, २९ अक्टूबर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

**चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण वेद प्रतियोगिता**- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गत वर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। २७ अक्टूबर को परीक्षा एवं २८ अक्टूबर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय १५ अक्टूबर, २०१७ तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज दें।

**सम्मान** - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान -समारोह होगा। जिसमें अनेक विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा।

अक्टूबर के आरम्भ में अजमेर में हलकी ठंड होने लगती हैं, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें। सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके। सभी से निवेदन है कि १३४वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकत्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

**ऋषि मेले में आमन्त्रित विद्वान् एवं विशिष्ट अतिथि**- प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु-अबोहर, श्री सुरेश अग्रवाल-प्रधान सार्वदेशिक सभा, आचार्य विजयपाल-झज्जर, श्री सोमपाल शास्त्री- पूर्व केन्द्रीय कृषि मन्त्री, श्री सज्जनसिंह कोठारी-लोकायुक्त जयपुर, श्री विजयसिंह भाटी-जोधपुर, श्री विनय आर्य-मन्त्री दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री इन्द्रजित् देव-यमुनानगर, डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री- रायबरेली, डॉ. रघुवीर वेदालंकार-दिल्ली, स्वामी ऋतस्पति-होशंगाबाद, डॉ. ब्रह्ममुनि-महाराष्ट्र, डॉ. वेदपाल-बड़ौत, आचार्या सूर्या देवी- शिवगंज, डॉ. विक्रम कुमार 'विवेकी'-चण्डीगढ़, श्री तपेन्द्र वेदालंकार-(रि. आई.ए.एस.) जयपुर, आचार्य विरजानन्द दैवकरणि-झज्जर, श्री कन्हैयालाल आर्य-गुरुग्राम, डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी'-दिल्ली, डॉ. रामचन्द्र-कुरुक्षेत्र, श्री दीनदयाल गुप्त-कोलकाता, श्री शत्रुघ्न आर्य-राँची, डॉ. जगदेव-रोहतक, डॉ. रमेशचन्द्र 'जीवन'- चण्डीगढ़, डॉ. वीरेन्द्र अलंकार-चण्डीगढ़, डॉ. ज्ञानप्रकाश-गुरुकुल काँगड़ी, डॉ. रूपकिशोर-गुरुकुल काँगड़ी, डॉ. सोमदेव 'शतांशु'-गुरुकुल काँगड़ी, डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार-कुरुक्षेत्र, डॉ. विनय विद्यालंकार, डॉ. कृष्णपाल सिंह-जयपुर, श्री सत्यानन्द आर्य- दिल्ली, श्री जगदीश शर्मा-जयपुर, श्री शिवकुमार चौधरी-इन्दौर, श्री जयदेव आर्य-राजकोट, श्री ठा. विक्रमसिंह-दिल्ली, डॉ. उदयन- तेलंगाना, श्री प्रकाश आर्य-महू, श्री सत्यपाल पथिक, प. भूपेन्द्र सिंह आदि।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। सभा को भारतीय शासन द्वारा विदेशों से दानस्वरूप दी गई राशि को प्राप्त करने की छूट प्राप्त है। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

| | | |
|---|---|---|
| गजानन्द आर्य | डॉ. सुरेन्द्र कुमार | ओम मुनि |
| संरक्षक | कार्यकारी प्रधान | मन्त्री |

ऐतिहासिक कलम....

# विविध विद्याओं और कलाओं की शिक्षा

आचार्य उदयवीर शास्त्री

**अभ्यास के विषय-** प्राचीन भारत में जहाँ तक अध्ययन के समय पाठ्य ग्रन्थों का प्रश्न है, प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च कक्षाओं में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकों की सूची देना सरल कार्य नहीं है। विभिन्न अधिकारी और विद्या की विभिन्न शाखाओं में उनके नैपुण्य का वर्णन बहुत उपलब्ध होता है। उस समय विद्यार्थियों को जो विषय पढ़ाये जाते थे, उनमें सबसे प्रिय एवं महत्त्वपूर्ण षडङ्गवेद तथा दशांग धनुर्वेद का उल्लेख आता है। वेद के छ: अंगों में 'शिक्षा' 'कल्प' 'व्याकरण' 'निरुक्त' 'छन्द' और 'ज्योतिष' का समावेश है। महाभारत (९/६/१४) में दुर्योधन के द्वारा दशांग धनुर्वेद के अध्ययन का वर्णन है। धनुर्वेद को 'चतुष्पाद' भी बताया है (म.भा. ५/१५८/३)। अभिमन्यु ने चतुष्पाद और दशांग अथवा दशविध धनुर्वेद अध्ययन किया था। कहीं-कहीं धनुर्वेद को 'पञ्चविध' भी कहा गया है। अर्जुन ने धनुर्वेद की समस्त शाखाओं का अध्ययन किया था (म.भा. ३/१६८/६६-६८)। इसके साथ-साथ महाभारत काल में आख्यानों के अध्ययन की ओर भी रुचि बढ़ती जाती थी (म.भा. १२/१०४/१४६-१५० तथा ७/७/१)। द्रोणाचार्य ने वेद और धनुर्वेद के अतिरिक्त अर्थविद्या अर्थात् अर्थशास्त्र का भी अध्ययन किया था, ऐसा वर्णन मिलता है (म.भा. ७/७/१)। पुराणों के साथ राजनीति तथा विधानशास्त्र और 'ज्योतिष' 'छन्द' 'निरुक्त' 'व्याकरण' 'कल्प' 'शिक्षा' एवं कर्मकांड विषयक साहित्य ने भी अनेक छात्रों का ध्यान आकृष्ट किया था। अध्ययन के विविध विषयों के साथ जहाँ इतिहास एवं शतपथ आदि का वर्णन है, वहाँ सांख्य-योग तथा उपनिषदों को भी पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया है। यह बात महाभारत (१२/३१८/२) में वर्णित याज्ञवल्क्य और जनक के संवाद से स्पष्ट होती है। रामायण (४/३/२८-२९ तथा ७/३६/४४-४५) में लिखा है कि हनुमान ने ऋग्‌वेदादि वेद, व्याकरण तथा छन्दशास्त्र आदि का पूर्ण अध्ययन किया था। रामायण महाभारत से यह भी स्पष्ट है कि महाभारतकार व्यास ने अपने शिष्यों को महाभारत तथा रामायणकार वाल्मीकि ने अपने शिष्य लव और कुश को रामायण का अध्ययन कराया था। शिक्षासम्बन्धी इन उल्लेखों के आधार पर चाहे यह स्पष्ट न कहा जा सके कि प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक के पाठ्यक्रम में किन-किन **पुस्तकों** का समावेश था, पर इतना अवश्य निश्चय किया जा सकता है कि पाठ्यक्रम में किन **विषयों** का समावेश था तथा उनके अध्ययन का क्रम क्या हो सकता था। यदि थोड़ी गम्भीरता से इस पर विचार किया जाए तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि पाठ्य- विषय की दृष्टि से उस समय में जो क्रम अपनाया जाता था, आज भी उसमें कोई विशेष अन्तर नहीं है।

आधुनिक समय के आवश्यक सभी विषयों का उल्लेख रामायण, महाभारत में उपलब्ध होता है। हनुमान के विषय में रामायण का यह लेख कि वह सूत्र, वृत्ति और अर्थ के विषय में पूर्ण ज्ञान रखता था, आश्चर्यकारक है, विशेष रूप से उस अवस्था में जबकि रामायण के व्याख्याकार ने इन पदों का अर्थ क्रमश: पाणिनीय अष्टाध्यायी, कात्यायनीय वार्त्तिक और पातञ्जल महाभाष्य किया है। वस्तुत: हनुमान के काल में यह कोई भी ग्रन्थ विद्यमान न था। यह सम्भव है कि उस समय व्याकरण के कोई अन्य ग्रन्थ रहे हों, और टीकाकार ने काल की पूर्वापरता पर कोई भी ध्यान न देकर अपने विचार के अनुसार मूल पदों का उपर्युक्त अर्थ कर दिया हो। यह उल्लेख रामायण के उत्तरकांड में उपलब्ध होता है। अनेक विद्वान् यह भी सन्देह करते हैं कि इस भाग की रचना वाल्मीकि ने की थी। यह बात निश्चित है कि हनुमान संस्कृत व्याकरण का ज्ञाता था और उसके भाषण में किसी अशुद्धि की सम्भावना नहीं रहती थी। द्रोण ने अर्थविद्या (अर्थशास्त्र) में आदरणीय निपुणता प्राप्त की थी। विदुर अपने समय में राजनीति व समाजशास्त्र का सम्माननीय पंडित माना जाता था। मानव-चिकित्सा के अतिरिक्त पशु- चिकित्सा तथा विशेष रूप से अश्वादि-चिकित्सा के अभ्यास का भी उल्लेख उपलब्ध होता है।

विद्या की इस शाखा में जानकारी के लिये नकुल का नाम लिया जाता है। इस प्रकार विद्या की अनेक शाखाओं के अभ्यास का वर्णन रामायण, महाभारत में मिलता है, जिनको आधुनिक काल में भी उसी प्रकार आवश्यक समझा जाता है।

कतिपय विद्वानों का विचार है कि विद्या की ये सब शाखायें अत्यन्त प्राचीन काल में भी पढ़ाई जाती थीं, यह मानना कठिन है। उनका कहना है कि अत्यन्त विवेक युक्त अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि धीरे-धीरे जो उपयोगी ज्ञान अस्तित्व में आता रहा वह पढ़ाने के विषय के रूप में स्वीकृत किया जाता रहा, उस पर प्रामाणिकता की मुहर लगाने के लिये उसको अत्यन्त प्राचीन चरित्र के साथ जोड़ दिया। इस प्रकार पढ़ाने के पुराने विषय के साथ नये ज्ञान को जोड़ने में तत्कालीन विद्वानों ने सहयोग दिया। रामायण, महाभारत में जिन विषयों का वर्णन अत्यल्प व कदाचित् ही हुआ है, वे सब इस श्रेणी में आ सकते हैं। कतिपय विद्वानों का विचार है कि वर्तमान महाभारत में महाभारत के पूर्व और महाभारत के बाद के साहित्य का उल्लेख मिलता है, इस कारण वर्तमान महाभारत का बहुत बड़ा भाग प्रक्षिप्त है, यह कथन रामायण के लिये भी उसी प्रकार सत्य है। तीन वेद और धनुर्वेद ऐसे विषय हैं जिनका अध्ययन क्रम में बार-बार उल्लेख मिलता है। भारतवर्ष के लोग इन विषयों को अति प्राचीन काल से पढ़ते थे।

यह ठीक है कि महाभारत आदि में बहुत अधिक भाग प्रक्षिप्त हो, पर आज तक भी उसका यथार्थ विवेचन नहीं हो पाया है। सच्चाई के साथ यह कहना कठिन है कि महाभारत में व्यास लिखित मूल अंश कितना है और अनन्तर काल में विभिन्न विद्वानों द्वारा लिखा गया भाग कितना है। इसलिये रामायण, महाभारत के अध्ययन-क्रम सम्बन्धी लेखों के विषय में यह कहना कठिन है कि इनमें कौन सा लेख महाभारत काल के बाद का है। सुपुष्ट प्रमाण के बिना ऐसा निर्णय किया जाना अशक्य होगा। इस विषय पर अन्य साहित्य के सहयोग से थोड़ा प्रकाश पड़ सकता है। यह निश्चित है कि प्रथम दस-ग्यारह उपनिषदों की रचना महाभारत काल से पूर्व हो चुकी थी। उस समय तक वे अपनी इतनी प्रतिष्ठित स्थिति में थे कि महाभारत के रचयिता व्यास ने वेदान्त सूत्रों की रचना उपनिषद् वाक्यों का सामञ्जस्य प्रकट करने के लिये की। छान्दोग्य उपनिषद् के सप्तमाध्याय के प्रारम्भ में वर्णन आता है कि नारद आत्मज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने की भावना से ऋषि सनत्कुमार के आश्रम में पहुँचे। ऋषि ने पूछा, तुम अभी तक क्या पढ़े हो? नारद ने इस प्रसंग में जो उत्तर दिया है, उससे स्पष्ट होता है कि छान्दोग्य उपनिषद् के रचना काल में तथा पूर्व भी निम्नलिखित विषयों का अध्ययन शिक्षा-केन्द्रों में बराबर होता था। चार वेद, इतिहास, पुराण, व्याकरण, गणित, शकुनशास्त्र (ऋतु ज्ञान विद्या), खनिजशास्त्र, तर्कशास्त्र, नीति शास्त्र, निरुक्त, वेद सम्बन्धी शिक्षा, कल्प, छन्द आदि, भौतिकी, धनुर्विद्या, ज्योतिष, सर्प विद्या तथा संगीत। इसलिये यह कथन संगत प्रतीत नहीं होता कि महाभारत आदि में तीन वेद और धनुर्वेद के अतिरिक्त शिक्षा केन्द्रों में जिन विषयों के अध्ययन का उल्लेख किया है वह महाभारत काल के बाद का प्रक्षिप्त अंश है।

उस समय का अभ्यास-क्रम मुख्यत: दो विभागों में विभक्त किया जा सकता है- १. ब्रह्मविद्या, २. क्षत्रविद्या। वस्तुत: ये ऐसे ही विभाग थे, जैसे आजकल सिविल और मिलिट्री। महाभारत आदि में इन्हीं विभागों में से प्रथम को कहीं तीन वेद और द्वितीय को धनुर्वेद के नाम से वर्णित किया गया है। इन दोनों विभागों की पृथक् रूप में अनेक शाखायें होती थीं, जिनका वर्णन अनेकत्र महाभारत आदि में किया गया है। ब्रह्मविद्या और क्षत्रविद्या के विभाग के आधार पर जब हम यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि बलिदान के कार्यों की श्लाघा और शूरवीरों की वीरता जिनका रामायण, महाभारत में पर्याप्त विस्तार है, समय के सामान्य झुकाव को प्रकट करता है। अत: रामायण महाभारत काल में लोग वेद और धनुर्वेद पढ़ते थे, इस अभिप्राय की आसानी से स्थापना की जा सकती है, उस समय हम यह भूल जाते हैं कि बलिदान की श्लाघा और वीरता के वर्णन में केवल धनुर्वेद की शिक्षा के प्रति झुकाव प्रकट होता है, ब्रह्मविद्या अथवा तीन वेदों का क्षेत्र तो उस समय भी रिक्त रह जाता है। वस्तुत: रामायण, महाभारत में बलिदान की प्रशंसा अथवा वीरता आदि का वर्णन प्रसंगानुकूल ही है। इन ग्रन्थों में अन्य वर्णन भी पर्याप्त हैं। जिन प्रसंगों को

लेकर ये ग्रन्थ लिखे गये हैं, उनके अनुसार वीरता आदि का अधिक वर्णन स्वाभाविक है, पर अन्य वर्णन भी ऐसे नही हैं, जिनके महत्त्व की उपेक्षा की जा सके। इस प्रकार अध्ययन क्रम के इन दो विभागों की विविध अवान्तर शाखाओं का अध्ययन भी भारत में अति प्राचीन काल से होता रहा है, यह इन ग्रन्थों के आधार पर स्पष्ट हो जाता है।

उस समय के आध्यात्मिक झुकाव को दृष्टि में रखते हुए आरण्यक, उपनिषद् का अभ्यास भी युक्तियुक्त प्रतीत होता है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि शुक्राचार्य जैसे व्यक्ति इस प्रकार के आध्यात्मिक साहित्य के अभ्यास व अध्ययन में संलग्न थे (म.भा. १२/२३१/७। रामा. २/३२/१५-२१)। वृषपर्वा के प्रसिद्ध मन्त्री शुक्राचार्य के समय से राज्य शासन का अध्ययन चला आता है। देवों के गुरु बृहस्पति ने अपने पुत्र कच को शुक्राचार्य के पास राजनीति व शासन का अध्ययन करने के लिये भेजा था। चाहे आज यह समझा जावे कि राज्य शासन प्रणाली का उस समय प्रारम्भिक काल था और शुक्र के समय तक उसकी क्रमिक उन्नति आश्चर्यकारक नहीं है, फिर भी राज्य शासन का नियमित अध्ययन राजकुमारों में बहुत प्रिय थां। (भीष्म-म.भा. १२ ३७/९/१३।। द्रुपद पुत्र-म. भा. ३/३२/६१-६२।। धृतराष्ट्र-म.भा. ११/१३/१२)। अन्य विद्वान् तीन वेद (ब्रह्मविद्या) और धनुर्वेद (क्षत्रविद्या) के अध्ययनाध्यापन में ही अधिक ध्यान देते थे।

महाभारत वर्णित सब संस्थाओं में अकेला कण्व का आश्रम एक प्रामाणिक संस्था के रूप में दिखाई देता है, जहाँ विद्या की बहुत सी मुख्य-मुख्य शाखाओं की शिक्षा दी जाती थी। वहाँ चारों वेद, कर्मकांड का साहित्य, दर्शन और दूसरे पवित्र ग्रन्थ पढ़ाये जाते थे। रामायण, महाभारत में आयुर्वेद और शल्यशास्त्र के विषय में भी उल्लेख मिलते हैं (म.भा. १२/३४१/९।। रामा. १/४९/६-८)। पर यह स्पष्ट ज्ञात नहीं होता कि विद्या की इन कलात्मक शाखाओं के अध्ययन के लिये कोई विशेषज्ञ अपना समय लगाते थे अथवा इनके अध्ययन के लिये कोई विशेष संस्था संचालित होती थी।

साहित्यिक शिक्षा के अतिरिक्त विभिन्न ललित कला और शिल्पकाला की शिक्षा का भी उल्लेख रामायण, महाभारत में उपलब्ध होता है। इन ललित कलाओं की संख्या चौंसठ थी। युधिष्ठिर की दासी कन्या इन चौंसठ ललित कलाओं में चतुर होने के अतिरिक्त नृत्य और संगीत में भी निपुण थीं (म.भा. २/६१/९.१०)। गर्ग भी इन चौंसठ कलाओं से परिचित था। किन्तु इन परम्परा प्राप्त चौंसठ कलाओं की संपूर्ण सूची कहीं नहीं मिलती। इस विषय में जो वृत्तान्त उपलब्ध है, उसके आधार पर विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि संगीत और नृत्य बहुत लोकप्रिय ललित कलाएं थीं। बृहस्पति का पुत्र कच संगीत और नृत्य में अत्यन्त निपुण था। अर्जुन भी उत्तरा को इन कलाओं की शिक्षा देने के लिये पर्याप्त योग्य था। शिखण्डी ने द्रोण से धनुर्वेद के साथ दूसरे शिल्प सम्बन्धी विषयों के अतिरिक्त चित्रकला की शिक्षा भी प्राप्त की थी (म.भा. ५/१८९/१-२)। सैनिक शिक्षा के साथ घोड़ा व हाथी का हांकना और रथ का चलाना योद्धओं में बहुत प्रिय था।

कितनी ही गुप्त कलाओं का भी निर्देश रामायण, महाभारत में उपलब्ध होता है। अंगारी पर्ण नामक व्यक्ति से अर्जुन ने चाक्षुषी विद्या की शिक्षा ग्रहण की थी। (म.भा. १/१७०/४३-४६) विश्वामित्र ने राम को बला और अतिबला नामक विद्या सिखाई थी (रामा. १/२२/१२-२१)।

संक्षेपत: भीष्म ने युधिष्ठिर को पढ़ने के विषयों की जो सूची दी थी, वह उस समय के लिये सर्वथा पर्याप्त व एक प्रकार से विस्तृत सूची थी। उन्होंने युधिष्ठिर को धनुर्वेद और वेद के अतिरिक्त हाथी, घोड़ा व रथ हांकने तथा उनके द्वारा युद्ध करने की कला को सीखने के लिये कहा, उसी प्रकार संगीत और नृत्य के साथ न्यायशास्त्र और व्याकरणशास्त्र भी पढ़ने आवश्यक समझने चाहिये। पुराण, इतिहास, आख्यान और सन्तों के साहसिक कार्य भी शिक्षा के अंग होने चाहिये। (म.भा. १२/१०४/१४६-१५०)। राजकुमार और साधारण जनता के अध्ययन-क्रम में कुछ अन्तर अवश्य रहता था।

---

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीव को अत्यन्त सुख पहुँचावें।

**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२**

## परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुन: भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।

## धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वनानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अत: दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

**खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)**

**१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।**

**IFSC - IBKL0000091**

**२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

**IFSC - SBIN0007959**

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

**- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१**

## वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

# शिक्षक सामान्य नहीं होता

**प्रभाकर आर्य**

"**आज व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया**" देश भर में वेद व आर्ष ग्रन्थों की दुन्दुभी बजाने वाले महर्षि दयानन्द सरस्वती के मुख से सहसा ये वाक्य निकल पड़े थे। जिसने अनार्ष ग्रन्थों के प्रचलन की आंधी में भी अडिग रहकर, स्वयं के कष्ट की चिन्ता न करके पुन: आर्ष ग्रन्थों की स्थापना की। ईश्वर की सनातन वाणी का रसास्वादन करने का अवसर इस संसार को दिया। । सुना है आज उन्होंने 'जल तक ग्रहण नहीं किया' आखिर क्यों?

ऋषियों के जिन ग्रन्थों को पाकर आज हम सम्पूर्ण भ्रान्त जगत् को ललकारने को उद्यत हो जाते हैं। सत्य-असत्य की कसौटी जिन शास्त्रों से हमें मिलती है, उन्हें स्वार्थी दानव दल के तीक्ष्ण पंजों से निकालकर जिसने हमें ये ब्रह्मास्त्र प्रदान किये, उसके लिये 'सूर्य' की उपमा भी फीकी मालूम पड़ती है। कौन था यह सूर्य?

सियालकोट और अमृतसर के मध्य में रावी नदी के निकट गंगापुर गाँव में सन् १७७९ को सारस्वत ब्राह्मण नारायण दत्त के घर एक पुत्र का जन्म होता है, या यों कहें कि एक सूर्य उदय हुआ। इस नवोदित सूर्य का नाम रखा गया-बृजलाल। पाँच वर्ष की अवस्था में चेचक का रोग हुआ और दोनों आँखें चली गईं। इसे ईश्वर की कृपा कहें या कोप-पता नहीं। दोनों आँखें तो गईं पर बुद्धि तीर की तरह इतनी तेज व तीक्ष्ण कि कठिन से कठिन विषय को भी बेधने में सक्षम। वैसे भी सूर्य को नेत्रों की नहीं, नेत्रों को सूर्य की आवश्यकता होती है। वह तो स्वयं प्रकाशपुञ्ज है, जिसके आलोक में सामान्य मनुष्य उचित-अनुचित का निर्णय करता है। सूर्य स्वयं को तपाता है, जलाता है-संसार के लिये। ठीक इसी प्रकार बालक बृजलाल भी मात्र १२ वर्ष की आयु में अनाथ हो गया। प्रथम तो नेत्र-विहीनता, ऊपर से अनाथ-ये कष्ट क्या कम था कि कुछ दिनों बाद भाई और भाभी से तिरस्कार भी मिलने लगा। वह सूर्य ही क्या जो बदलियों में छिपकर रह जाये, उसे बादलों को चीरना ही होगा अन्यथा उसके सूर्य होने का लाभ ही क्या? बृजलाल को तिरस्कार सहन नहीं हुआ और मात्र तेरह वर्ष की आयु में बिना किसी को बताये सदैव के लिये स्वाभिमानी जीवन जीने का रास्ता चुनकर घर छोड़ दिया और ऋषिकेश की ओर चल दिये। एक अबोध अन्धे बालक ने पंजाब से ऋषिकेश तक की यात्रा कैसे तय की होगी-ये विचार ही कँपा देने वाला है। ३-४ वर्ष बाद हरिद्वार पहुँचकर ब्रजलाल ने स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास लेकर **स्वामी विरजानन्द सरस्वती** नाम पाया।

संस्कृत व सारस्वत व्याकरण, अमरकोष, पंचतन्त्र और हितोपदेश का अध्ययन तो पिता से ही कर लिया था, यहाँ पर सिद्धान्त कौमुदी पढ़ी व अष्टाध्यायी भी कण्ठस्थ कर ली। स्वामी विरजानन्द सरस्वती ज्ञान-पिपासु थे। नेत्रहीन होते हुये भी उन्होंने साहित्यदर्पण, कुवलयानन्द, काव्यप्रकाश, रसगंगाधर आदि काव्यशास्त्र, दर्शन, आयुर्वेद, संगीत, वीणा-वादन व फारसी भाषा में भी दक्षता प्राप्त की। साथ ही शतरंज के इतने कुशल खिलाड़ी कि मथुरा में निवास के समय स्वामी जी के स्नेहपात्र नयनसुख जड़िया से मथुरा के रईस केदारनाथ खत्री ने एक बार पूछ लिया कि नगर में शतरंज का सबसे अच्छा खिलाड़ी कौन है। जड़िया जी ने तपाक से कह दिया कि स्वामी विरजानन्द दण्डी हैं। स्वामी जी को यह बात पता लगी तो उन्होंने जड़िया जी को फटकारा और कहा कि "नयनसुख! भोजन और भाषण में मर्यादा बरतनी चाहिये। इन कार्यों से अध्ययन में विघ्न पड़ता है, इन्हें कह दो कि यहाँ शतरंज नहीं है।" यह सुनकर खत्री जी शतरंज स्वयं ले आये। अब दण्डी जी क्या कहते? शतरंज शुरु हो गया।

दण्डी जी बोले, नयनसुख! दो काम करना-जो मोहरा मैं कहूँ वह चलना और लाला जो मोहरा चले वह मुझे बता देना।

दण्डी जी-अच्छा अब बादशाह का प्यादा चलो।

नयनसुख-चल दिया, महाराज।

दण्डी जी-लाला क्या चले हैं?

नयनसुख-वह भी बादशाह का प्यादा ही चले हैं।

दण्डी जी बोलते गये और जड़िया जी मोहरे चलते गये। खेल समाप्ति की ओर था। दण्डी जी बोले-अब तक हम दोनों की एक सौ इकहत्तर चालें हुई हैं। अब मैं एक सौ बहत्तरवीं चाल चलता हूँ। दण्डी जी ने घोड़े की ढ़ाई चाल चल दी। खत्री जी ने बायीं ओर हाथी के पास से बादशाह हटा लिया।

दण्डी जी-जड़िया जी, चाल तो ऊँट की भी चली जा

सकती है, लेकिन तुम वज़ीर की चाल चलो और कह दो-मात।

जड़िया जी वज़ीर को छूने ही वाले थे कि खत्री जी अपने बादशाह की हालत पर हैरान रह गये और अनायास ही बोल उठे-क्या खूब करामाती मात है।

ये थी उनकी बिना आँखों के शतरंज की योग्यता। आँखें होतीं तो न जाने क्या होता? शायद ईश्वर ने इस युग प्रवर्तक को इस मोहिनी प्रकृति के पाशों से दूर रखने के लिये ऐसा किया हो।

स्वामी जी बचपन से ही स्पष्ट स्वभाव के थे। जो बात उन्हें अनुचित प्रतीत होती उसे स्पष्ट कह देते थे ओर जो उचित लगती उसे उतनी ही तत्परता से स्वीकार भी कर लेते थे। स्वामी जी अष्टाध्यायी को व्याकरण के अन्य शास्त्रों की अपेक्षा अधिक महत्त्व देते थे, परन्तु उन दिनों अष्टाध्यायी पूर्ण शुद्ध-रूप में उपलब्ध न थी, इसलिये वे छात्रों से कहते थे कि जब तक अष्टाध्यायी की शुद्ध प्रति न मिल जावे, तब तक सिद्धान्त कौमुदी से काम चलाना पड़ेगा।

१८५९ का वर्ष भारत के भविष्य का निर्णायक व परिवर्तनकारी वर्ष सिद्ध हुआ। स्वामी जी के दो शिष्य गंगादत्त चौबे तथा रंगदत्त चौबे सायंकाल यमुना के घाट पर अष्टाध्यायी के सूत्र (४.१.४) पर सिद्धान्त कौमुदी में लिखे शब्द 'अजाद्युक्तिः' के समास पर विचार कर रहे थे। दोनों इस निर्णय पर पहुँचे कि इसमें षष्ठी तत्पुरुष समास है। वहाँ उपस्थित ज्योतिषी लक्ष्मण व मुरमुरिया पण्ड्या ने सप्तमी तत्पुरुष समास घोषित कर दिया। दोनों शिष्यों ने जाकर स्वामी जी से यह प्रश्न पूछा। दण्डी जी ने भी षष्ठी तत्पुरुष ही बताया। उधर लक्ष्मण शास्त्री व मुरमुरिया पण्ड्या ने अपने गुरु श्री कृष्ण शास्त्री से सलाह ली, उन्होंने सेठ-आश्रित पंडितों का ही समर्थन किया। अन्ततः यह बात शास्त्रार्थ का विषय बन गई। शास्त्रार्थ में पं. कृष्ण शास्त्री उपस्थित ही न हुये। अतः दोनों शिष्य व पंडितों में शास्त्र-चर्चा होने लगी। सेठ राधाकृष्ण, जो स्वयं ही सभापति बन गये थे, उन्होंने बीच में ही ''विरजानन्द परास्त हो गये'' कहकर घण्टे बजवा दिये, साथ ही काशी के पंडितों को धन देकर अपने पक्ष में व्यवस्था भी लिखवा लाये। दण्डी जी ने जब यह सब सुना तो पण्डितों के इस पतित आचरण से बहुत आहत हुए।

एक बार स्वामी जी '**कर्तृकर्मणोः कृति**' सूत्र पर विचार कर रहे थे कि अचानक निश्चय हुआ कि पाणिनि मतानुसार उनकी षष्ठी तत्पुरुष सम्बन्धी मान्यता बिल्कुल सही है। उनकी ऋषिकृत शास्त्रों पर आस्था और अधिक दृढ़ हो गई और सामान्य मनुष्यकृत ग्रन्थों में उतनी ही अनास्था भी। आधुनिक व्याकरणों के विरोध में उन्होंने एक श्लोक भी लिखा, जो उनकी हृदय-वेदना को प्रकट करता है-

**अष्टाध्यायी महाभाष्ये द्वे व्याकरण पुस्तके।**
**ततोन्यत् पुस्तकं यत्तु तत्सर्वं धूर्तचेष्टितम्।।**

व्याकरण की दो ही पुस्तकें हैं-अष्टाध्यायी और महाभाष्य। इसके अतिरिक्त जो भी पुस्तकें (कौमुदी आदि) हैं, वे सब धूर्तों की कुचेष्टा मात्र हैं। वे कौमुदी के लेखक भट्टोजि दीक्षित को 'भट्टो भूत' कहते थे और कहते थे कि अष्टाध्यायी पर होने वाले अत्याचारों में अन्तिम अत्याचार 'भट्टोजि दीक्षित' है। गुरु विरजानन्द जी ने अपनी पाठशाला में सिद्धान्त कौमुदी, शेखर, चन्द्रिका, मनोरमा आदि पूर्णतया निषिद्ध करके अष्टाध्यायी और महाभाष्य का पठन आरम्भ कर दिया।

आर्ष-पाठ विधि के समर्थक तो उनके बाद भी कई हुये और आज भी ऐसे समर्थकों की कमी नहीं है, पर स्वामी विरजानन्द जी जरा हटकर हैं। लोग ऋषिकृत ग्रन्थों के समर्थक तो हैं लेकिन उसी विषय की अपनी पुस्तकों का उत्पादन करने में भी कोई कसर नहीं छोड़ते। कोई पुस्तक यदि मौलिक हो या शास्त्रों के गूढ़ रहस्यों को समझने में सहायक हो तो वह साहित्य-रचना लाभकारी है, परन्तु यदि उस सस्ते (निम्नस्तरीय) साहित्य को सरल बताकर आर्ष ग्रन्थों के विकल्प में प्रस्तुत किया जाये और उसके कारण लोग मूल आर्ष ग्रन्थों को भूलने लगें या कठिन समझकर छोड़ने लगे तो निश्चित ही यह 'भट्टोजि दीक्षित' श्रेणी में आ जायेगा। विरजानन्द जी ने जिस क्षण आर्ष और अनार्ष को समझकर आर्ष को अपनाया उसी क्षण स्वरचित ग्रन्थों को भी तिरस्कृत कर दिया।

एक दिन उन्होंने अपने शिष्य गोपीनाथ भट्ट को ये आदेश दिया कि कौमुदी आदि सभी अनार्ष ग्रन्थों को यमुना में बहा आओ, साथ में स्वरचित ग्रन्थ 'वाक्य मीमांसा' व 'पाणिनीय सूत्रार्थ प्रकाश' भी दे दिये। शिष्य ने बाकी पुस्तकें बहाकर गुरु जी की पुस्तकें रख लीं और आकर झूँठ बोल दिया। जब गुरु जी को सत्य पता लगा तो उन्होंने शिष्य को पाठशाला से बाहर निकाल दिया। विद्यार्थियों में

इन ग्रन्थों के प्रति तनिक भी आस्था ना रहे, इसके लिये वे पाठशाला में एक जूता रखते और प्रत्येक विद्यार्थी भट्टोजि दीक्षित के नाम पर जूता लगाता। विद्यार्थियों को शपथ भी दिलवाते कि अष्टाध्यायी पठन काल में कौमुदी देखनी भी नहीं है। अनार्ष ग्रन्थों के प्रति उनका विरोध किसी द्वेष के कारण नहीं था। देश की परतन्त्रता, समाज में बढ़ते पाखण्ड, अन्धविश्वास, ब्राह्मण-शिक्षकों के निरन्तर पतन का कारण इन ग्रन्थों का पठन-पाठन ही था।

जिस समय दयानन्द सरस्वती गुरु विरजानन्द जी की कुटिया में प्रथम बार अध्ययनार्थ आये तो विरजानन्द जी ने उन्हें अनार्ष ग्रन्थों को यमुना में बहाने का आदेश देते हुए ये समझाया-दयानन्द! वर्तमान में ग्रन्थों की रचना का उद्देश्य लोकोपकार या विद्या का विस्तार नहीं बल्कि निरा स्वार्थ होता है। एक घटना सुनाते हुए बोले कि एक बार वृद्धावस्था में अनुभूतिस्वरूपाचार्य के अगले दाँत न होने के कारण 'पंसु' के स्थान पर 'पुंक्षु' शब्द बुल गया तो अपनी अशुद्धि को स्वीकार करने की बजाय गलती को सही सिद्ध करने के लिये एक ही रात में 'सारस्वत व्याकरण' की रचना कर दी। भला ऐसे ग्रन्थों से लोक-कल्याण कैसे हो सकता है? अपने इस उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिये उन्हें दयानन्द सरस्वती के रूप में एक उत्तराधिकारी मिल ही गया और वह भी ऐसा कि सत्य बात को कहने में गुरु से भी एक कदम आगे।

दण्डी जी पुराने संस्कारों के कारण दुर्गापाठ किया करते थे। शिष्य भी कोई कम नहीं था-तुरन्त उसके औचित्य पर प्रश्न कर दिया। कई बार शास्त्र-चर्चा करते-करते गुरु शिष्य में शास्त्रार्थ का आगाज़ हो जाता तो दयानन्द को पराजित न होता हुआ देखकर कहते-"तुमसे कौन वाद-विवाद करे? तुम तो कालजिह्व हो। जैसे काल सब पर बली है वैसे तुम्हारी तर्कशक्ति भी प्रबल है। तुझ कुलक्कर को कौन हराये?"

विरजानन्द जी ने कभी ऊँचे आसन पर बैठकर नहीं पढ़ाया। शिष्यों के साथ नीचे ही बैठते। गद्दी को 'गधी' कहते। व्यंग्य में कहा करते कि "गधी पर बैठकर आर्ष ग्रन्थ पढ़ाना शोभा नहीं देता।" इतनी सरलता होने पर भी उनमें जो कठोरता थी वह अनुशासन, अध्ययन और व्यवस्था के प्रति थी। समाज को बदलने के लिये इतनी कठोरता तो अनिवार्य भी है। इसे कठोरता ना कहकर लक्ष्य के प्रति अनुराग कहना अधिक उचित होगा। बड़े-बड़े झाड़ को साफ करने लिये दरांती में तेज धार का होना अनिवार्य है। अपनी इसी योग्यता के बल पर ही तो वो पूरी मथुरा नगरी का विरोध सहन करके भी आर्ष शास्त्रों का पठन-पाठन प्रारम्भ कर पाये। आर्ष ग्रन्थों को देश भर में प्रचलित करने के लिये उन्होंने जयपुर नरेश सवाई रामसिंह, महारानी विक्टोरिया आदि से निवेदन भी किया, पर सब व्यर्थ। इसलिए यह सूर्य अब स्वयं चमका। लोगों को कुछ गर्मी तो झेलनी पड़ी पर उससे मिलने वाले प्रकाश व ऊर्जा के सामने वह कष्ट नगण्य था। उसने स्वयं को जलाकर इस समस्त संसार के लिये प्रकाश दिया है और उन्हें वैसा ही शिष्य मिला जो स्वयं को जलाकर तपाकर इस प्रकाश को संसार भर में फैला दे।

अन्त समय में शिष्य रोने लगे तो गुरु ने रोने का कारण पूछा। शिष्यों ने कहा कि अब हमें अष्टाध्यायी कौन पढ़ायेगा? जो उत्तर गुरु जी ने दिया वो ऋषियों के प्रति, उनके ग्रन्थों के प्रति श्रद्धा का उच्चतम शिखर है। वो अष्टाध्यायी मंगवाकर बोले-मैं इसमें प्रविष्ट होता हूँ। जो कुछ पूछना हो, इससे पूछ लेना। वह १३ आश्विन बदी १९२५ वि. (१४ सितम्बर, १८६८) का दिन था, जब यह सूर्य अपनी ज्योति सैकड़ों दीपकों (शिष्यों) को बाँटकर अस्ताचल की ओर चल दिया।

स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी ने 'शब्दबोध', 'वाक्य मीमांसा', 'पाणिनीय सूत्रार्थ प्रकाश' आदि ग्रन्थ लिखे पर महत्त्व ऋषिकृत ग्रन्थों को ही दिया। भारत के शिक्षा पाठ्यक्रम में सुधार हेतु सार्वभौम सभा का विवरण-पत्र जो उन्होंने राजा रामसिंह को लिखा था-दण्डी जी के विचारों को समझने के लिये उपयुक्त है। चलती व्यवस्था को चलाना आसान होता है। पर पुरानी व्यवस्थाओं को तोड़कर नई व्यवस्थाएँ बनाना वो भी बिना साधनों के- सामान्य मनुष्य का काम नहीं। स्वामी जी ने समाज के विरोध में आकर, जब आर्ष परम्परा नहीं थी, उस समय स्वयं चिन्तन करके वेदमत को पुनर्स्थापित करने का कार्य किया और यह कार्य कोई सूर्य ही कर सकता है। क्योंकि सूर्य अन्धेरे को छाँटकर दिन का प्रारम्भ करता है और संसार को सही दिशा देता है। इसीलिये शहबाजपुर में धर्म प्रचार कर रहे महर्षि दयानन्द के मुख से ये वाक्य स्वतः निकल गया-

**"आज व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया।"**

# वैदिक पुस्तकालय अजमेर
## द्वारा प्रकाशित व उपलब्ध नये संस्करण

**१. सत्यार्थ प्रकाश में क्या है?** **लेखक - प्रो. धर्मवीर,** **प्रकाशक**- परोपकारिणी सभा, अजमेर,
**पृष्ठ संख्या**- ३२ **मूल्य** - रु. १५/-

प्रस्तुत पुस्तक का डॉ. धर्मवीर जी के युवापन की रचना है। इस पुस्तक को पं. भारतेन्द्रनाथ जी (महात्मा वेदभिक्षु) ने डॉ. धर्मवीर जी से आग्रहपूर्वक लिखवाया था। पहली बार इसे सन् १९७५ में महात्मा वेदभिक्षु जी ने ही प्रकाशित किया था। एक लम्बे अन्तराल के बाद परोपकारिणी सभा ने इसका पुनर्प्रकाशन किया है। इस पुस्तक को पढ़कर नये से नया व्यक्ति सत्यार्थप्रकाश के महत्व को समझ सकता है अर्थात् यह पुस्तक आर्यसमाज के प्रचार में सहायक सिद्ध हो सकती है। आर्य महानुभावों से अनुरोध है कि इसे अधिक से अधिक संख्या में खरीदकर नई पीढ़ी तथा नये लोगों को वितरित करें तथा प्रकाशनों से भी निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में इसे मंगायें ताकि लोग उसे खरीद सकें। इस ग्रन्थ को पढ़ने से ऋषि दयानन्द के अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को पढ़ने की प्रेरणा मिलती है। सत्यार्थप्रकाश की समस्त विषयवस्तु को इस ग्रन्थ में समाहित किया गया है। पाठक इसे पढ़कर लाभ उठायेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

**२. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार ( २ भाग में )**
**मूल्य - रु. ८००/- पृष्ठ संख्या - प्रथम व द्वितीय भाग-६९६+६९६**
**महर्षि दयानन्द का महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहार मूल्य - रु. ४००/- पृष्ठ संख्या - ६१६**

ऐतिहासिक महत्त्व का ग्रन्थ है। इस संस्करण की यह विशेषता है कि पत्र और उसका उत्तर साथ-साथ दिये गए हैं। आर्य जाति और आर्यावर्त्त के उत्थान की महती आकांक्षा ऋषिवर के पत्रों में स्पष्ट झलकती है। माननीय डॉ. वेदपाल जी द्वारा सम्पादित यह ग्रन्थ पठनीय एवं संग्रहणीय है। साज-सज्जा और मुद्रण भी उत्तम है। समाप्त होने से पहले- पहले क्रय कर लेवें तो अच्छा रहेगा।

**३. 'नवयुग की आहट',महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित:**
**मूल्य - रु. ६०/- पृष्ठ संख्या- १९२**

१०० से अधिक उपशीर्षकों एवं १३ अध्यायों में लिखा गया ऋषि का यह अनुपम जीवन चरित है। लेखक हैं- ऋषि मिशन के दीवाने, आर्यजाति के प्रहरी, दिल जले आर्य साहित्यकार प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु। पुस्तक में आप जान पायेंगे कि ऋषि का पाखण्ड-खण्डन, सामाजिक दोषों के निराकरण, स्त्री-शिक्षा, अछूतोद्धार, वेदोद्धार, सामाजिक पुनर्जागरण, राष्ट्र-उद्धार के क्षेत्र में क्या योगदान है तथा उनके समकालीन और परवर्ती महापुरुष उनके विषय में क्या कहते हैं।

**४. इतिहास की साक्षी: लेखक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञास मूल्य - रु. ५०/- पृष्ठ संख्या - ९६**

९६ पृष्ठों की इस पुस्तक में विद्वान् लेखक ने महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी के सम्बन्ध में तथ्यात्मक जानकारी दी है। श्रद्धाराम फिल्लौरी के हाथ के लिखे पत्र की एवं अन्य ऐतिहासिक दस्तावेजों की फोटो कापियाँ इसमें दी हैं, जो अन्यथा दुर्लभ हैं।

**५. असली महात्मा ( हिन्दी ) मूल्य - रु. २००/- पृष्ठ संख्या - २४७**

यह पुस्तक मूलरूप से तेलुगु में लिखी गई है। लेखक श्री एम.वी.आर. शास्त्री ने जिस शोधपूर्ण ढंग से और जिस सरसता से इस पुस्तक को लिखा है, उससे दस्तावेजों में रुचि रखने वालों और उपन्यास में रुचि रखने वालों के लिये भी यह एक अतुलनीय ग्रन्थ है। हिन्दी में अनुवाद करते समय श्री जे.एल. रेड्डी ने लेखक के मूल भावों को जिस दक्षता से संजोया है, उससे हिन्दी पाठकों को ये ऐतिहासिक दृष्टि वाला ग्रन्थ किसी उपन्यास से कम नहीं लगेगा।

## वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली
## पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

**IFSC - PUNB0000800**

# पाठकों के विचार

**यज्ञ-प्रक्रिया में त्रुटि एवं सुधार** -आपको आश्चर्य होगा कि यज्ञ की प्रचलित प्रक्रिया यानी विधि जो "लौ के साथ जलते हुए अग्नि में घृत एवं हव्य की आहुतियाँ डालकर लौ के जलाने की" है, गलत व हानिकारक है। घोर दु:ख की बात है कि समस्त उच्चकोटि के वैज्ञानिक एवं शोधकर्त्तागण भी इस हानिकारक पक्ष को अति-लाभदायक बताकर महिमामंडित करते रहे हैं। यदि यज्ञ में कोयले या कंडे की लौ-रहित अग्नि में घृत एवं हव्य की आहुतियाँ डालकर बगैर लौ के जलाया जाए तो इससे घृत एवं हव्य के मूल रसायन वाष्प के रूप में हवा में फैलेंगे। जो संपूर्णता में हजारों गुना अधिक लाभदायक हैं। यज्ञ एक विज्ञान आधारित निष्काम कर्म है, जो आर्य समाज में बहुत ही आवश्यक परोपकारी कर्म है।

इसके लिये दो तथ्य साक्ष्य में निम्नानुसार हैं-

(१) यज्ञ में आहुति किया गया घृत एवं हव्य की रसायनें हजारों गुना लाभदायक हो जाते हैं और हजारों-लाखों लोगों को नासिका से ग्रहण होकर लाभ देते हैं इस उदाहरण में प्राय: लिखा एवं कहा जाता है कि जैसे कि एक सूखी लाल मिर्च को जलाने से सैकड़ों लोग छींक-छींक कर भयंकर रूप से परेशान हो जाते हैं, ऐसे ही यज्ञ में आहुति किया गया घृत आदि भी हजारों गुना अधिक लाभदायक हो जाता है, परन्तु यह नहीं लिखा जाता है कि ऐसा 'लौ-रहित अग्नि' यानि अंगारों की अग्नि में डालकर, बगैर लौ के साथ जलाने पर होता है अथवा 'लौ-युक्त अग्नि' यानि लौ के साथ जल रही अग्नि में। यहाँ यह सर्वमान्य होना चाहिए कि जिस प्रकार की अग्नि में एक लाल मिर्च को जलाने से सैकड़ों लोगों को तीक्ष्णता लगेगी तो उसी प्रकार की अग्नि में किये गये यज्ञ से सैकड़ों लोगों को घृत एवं हव्य की सुगंधियाँ ग्रहण होंगी तथा यज्ञ के समस्त वांछित लाभ प्राप्त होंगे। इसे स्वयं देखने व परीक्षण करने के लिये एक सूखी लालमिर्च को चिमटी आदि से पकड़ कर, लौ-युक्त अग्नि या घर में जलते गैस की लौ में ले जाकर जलायें। आप को मिर्च की तीक्ष्णता बिल्कुल नहीं लगेगी। अब पुन: इसी तरह एक सूखी लालमिर्च को चिमटी आदि से पकड़कर लौ-रहित अग्नि यानी कोयले या कण्डे की अग्नि में डालकर या घर में जलते गैस की लौ से करीब ४ से ५ इंच ऊपर रखकर तेज गर्म कर वाष्प यानि धुआँ करें। इस लाल मिर्च का उदाहरण डॉ. रामप्रकाश जी की पुस्तक में भी लिखा है। इससे यह साक्ष्य मिलता है कि 'लौ-युक्त अग्नि' में जलाने की अपेक्षा वाष्प यानी धुआँ के साथ 'लौ-रहित यज्ञ' हजारों गुना अधिक लाभदायक है और यही यज्ञ की वैदिक प्रक्रिया है।

(२) सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास-११ के पृष्ठ २६७ (भिन्न संस्करणों में भिन्न पृष्ठ हो सकते हैं) पर विभिन्न प्रकार की अग्नियों में 'लौ-युक्त अग्नियों' के गुण, प्रभाव का उदाहरण देने हेतु स्वामी दयानन्द जी ने ज्वालामुखी सम्बन्धी एक प्रश्न के उत्तर में लिखा है कि "जैसे बघार के घी के चमचे में ज्वाला आ जाती, अलग करने से वा फूँक मारने से बुझ जाती, थोड़ा सा घी को खा जाती, शेष छोड़ जाती, उसी के समान वहाँ भी है। जैसे चूल्हे की ज्वाला में जो डाला जाय, सब भस्म होता, जंगल वा घर में लग जाने से सबको खा जाती है"। क्योंकि बघार, चूल्हे, जंगल, घरों आदि में लगी अग्नि 'लौ-युक्त' ही होती है, अत: यह विध्वंसक यानि पदार्थों के मूल रूप एवं गुणों को छिन्न-भिन्न कर भस्म यानि नष्ट, परिवर्तित करने वाली होती है और बदले में ऊष्मा यानि गर्मी के साथ कार्बन डाईऑक्साइड आदि गैसें ही मिलती हैं।

**वेदप्रकाश गुप्ता, लखनऊ।**

---

इस बात का निश्चय है कि ब्रह्मचर्य्य, उत्तम शिक्षा, विद्या, शरीर और आत्मा का बल, आरोग्य, पुरुषार्थ, ऐश्वर्य, सज्जनों का संग, आलस्य का त्याग, यम-नियम और उत्तम सहाय्य के विना किसी मनुष्य से गृहाश्रम धारा जा नहीं सकता।

**- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.३१**

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०**

ओ३म्

# परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) पिन. ३०५००१ दूरभाष– ०१४५–२४६०१६४

## वेदगोष्ठी–२०१७

मान्यवर सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्भावी विद्वानों के सहयोग से सदा की भांति इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली तथा अनुसंधान विभाग परोपकारिणी सभा, अजमेर के संयुक्त तत्त्वावधान में ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध–पत्र परोपकारी व वेदपीठ की शोध–पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं। जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते वे भी लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। गत २८ वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है। अब तक निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया जा चुका है:–

| | |
|---|---|
| १. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली। | १२ नवम्बर, १९८८ |
| २. वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग। | ०५ नवम्बर, १९८९ |
| ३. अथर्ववेद समस्या और समाधान। | २७ नवम्बर, १९९० |
| ४. वेद और विदेशी विद्वान्। | १६ नवम्बर, १९९१ |
| ५. वैदिक आख्यानों का वास्तविक स्वरूप। | ०१ नवम्बर, १९९२ |
| ६. वेदों के दार्शनिक विचार। | २८ नवम्बर, १९९३ |
| ७. सोम का वैदिक स्वरूप। | १२ नवम्बर, १९९४ |
| ८. पर्यावरण समस्या का वैदिक समाधान। | ०३ नवम्बर, १९९५ |
| ९. वैदिक समाज व्यवस्था। | ०१ नवम्बर, १९९६ |
| १०. वेद और राष्ट्र। | २४ अक्टूबर, १९९७ |
| ११. वेद और विज्ञान। | ०९ अक्टूबर, १९९८ |
| १२. वेद और ज्योतिष। | १० नवम्बर, १९९९ |
| १३. वेद और पदार्थ विज्ञान | ०३ नवम्बर, २००० |
| १४. वेद और निरुक्त | १८ नवम्बर २००१ |
| १५. वेद में इतिहास नहीं | ०१ नवम्बर २००२ |
| १६. वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान | ३१ अक्टूबर २००३ |
| १७. वेद में शिल्प | १९ नवम्बर २००४ |
| १८. वेदों में अध्यात्म | ११ नवम्बर, २००५ |
| १९. वेदों में राजनीतिक चिन्तन | २७ नवम्बर, २००६ |
| २०. ''वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है'' | १६ नवम्बर, २००७ |
| २१. वैदिक समाज विज्ञान | ०५ नवम्बर, २००८ |
| २२. सत्यार्थप्रकाश का ७ वाँ समुल्लास व वेद | २३ अक्टूबर, २००९ |
| २३. सत्यार्थप्रकाश का ८ वाँ समुल्लास व वेद | १२ नवम्बर, २०१० |
| २४. सत्यार्थप्रकाश का ९ वाँ समुल्लास व वेद | ०४ नवम्बर, २०११ |
| २५. महर्षिदयानन्दाभिमत मन्तव्य: वैदिक परिप्रेक्ष्य | १६ नवम्बर, २०१२ |
| २६. वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास | ८ नवम्बर, २०१३ |
| २७.भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद | ३१ अक्टू. १,२ नव., २०१४ |
| २८.भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद | २०,२१,२२ नव., २०१५ |
| २९.दयानन्द दर्शन की वेदमूलकता | ४,५,६ नव., २०१६ |
| ३०. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त | २७,२८,२९ अक्टू., २०१७ |

।।ओ३म्।।

## वेद गोष्ठी २०१७ के लिए निर्धारित विषय

# वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त

**उपशीर्षक :**

1. ऋग्वेद में शिक्षा चिन्तन की मीमांसा
2. ऋग्वेद में शिक्षा के प्रमुख सिद्धान्त और उनकी विवेचना
3. ऋग्वेद में शिक्षक और शिष्य सम्बन्धों की मीमांसा
4. ऋग्वेद में शिक्षा का पाठ्यक्रम - विश्लेषणात्मक अध्ययन
5. ऋग्वेद में शिक्षण-विधि के विभिन्न आयाम
6. ऋग्वेद के प्रमुख शिक्षाशास्त्री और उनके विचार
7. यजुर्वेद में शिक्षा चिन्तन की मीमांसा
8. यजुर्वेद में शिक्षा के प्रमुख सिद्धान्त और उनकी विवेचना
9. यजुर्वेद में शिक्षक और शिष्य सम्बन्धों की मीमांसा
10. यजुर्वेद में शिक्षा का पाठ्यक्रम - विश्लेषणात्मक अध्ययन
11. यजुर्वेद में शिक्षण-विधि के विभिन्न आयाम
12. यजुर्वेद के प्रमुख शिक्षाशास्त्री और उनके विचार
13. सामवेद में शिक्षा चिन्तन की मीमांसा
14. सामवेद में शिक्षा के प्रमुख सिद्धान्त और उनकी विवेचना
15. सामवेद में शिक्षक और शिष्य सम्बन्धों की मीमांसा
16. सामवेद में शिक्षा का पाठ्यक्रम - विश्लेषणात्मक अध्ययन
17. सामवेद में शिक्षण-विधि के विभिन्न आयाम
18. सामवेद के प्रमुख शिक्षाशास्त्री और उनके विचार
19. अथर्ववेद में शिक्षा चिन्तन की मीमांसा
20. अथर्ववेद में शिक्षा के प्रमुख सिद्धान्त और उनकी विवेचना
21. अथर्ववेद में शिक्षक और शिष्य सम्बन्धों की मीमांसा
22. अथर्ववेद में शिक्षा का पाठ्यक्रम - विश्लेषणात्मक अध्ययन
23. अथर्ववेद में शिक्षण-विधि के विभिन्न आयाम
24. अथर्ववेद के प्रमुख शिक्षाशास्त्री और उनके विचार
25. वेदांग में प्रमुख शिक्षा के सिद्धान्त
26. वैदिक काल में शिक्षा दर्शन
27. उपनिषदों में शिक्षण की विभिन्न शैलियाँ
28. उपनिषदों में आचार्य और शिष्य सम्बन्धों की विवेचना
29. उपनिषदों में अध्ययन का पाठ्यक्रम
30. उपनिषदों के संदर्भ में गुरुकुलों की विवेचना
31. उपनिषदों में शिक्षा का परम उद्देश्य
32. उपनिषदों में शिक्षण-विधि की विवेचना
33. प्राचीन भारतीय शिक्षा दर्शन
34. प्राचीन भारत में शिक्षण-विधि और प्रकार
35. प्राचीन भारत में शिक्षा के विभिन्न उपागमों का अध्ययन
36. वैदिक साहित्य में आचार्य की भूमिका
37. मनुस्मृति में शिक्षा के सिद्धान्त
38. षड्दर्शनों में शिक्षण के सिद्धान्त
39. षड्दर्शनों में आचार्य-शिष्य सम्बन्धों का आलोचनात्मक विवेचन
40. न्याय-वैशेषिक दर्शनों में शिक्षा के सिद्धान्त
41. न्याय-वैशेषिक दर्शनों में शिक्षण की प्रमुख विधि
42. सांख्य-योग में शिक्षा दर्शन
43. वैदिक शिक्षा दर्शन में शिक्षण संस्थानों का प्रशासन-आर्थिक परिप्रेक्ष्य में
44. वैदिक शिक्षा दर्शन एवं आधुनिक शिक्षा-शास्त्री विशेषत: महर्षि दयानन्द सरस्वती के संदर्भ में
45. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त और महर्षि दयानन्द
46. वैदिक शिक्षण-विधियाँ उनकी क्रियात्पक पक्ष के संदर्भ में
47. वैदिक शिक्षा सिद्धान्त और आधुनिक भारतीय शिक्षा-शास्त्री
48. प्राचीन भारत में शिक्षा-दर्शन, उसकी प्रक्रिया एवं साधन
49. वैदिक शिक्षा के सिद्धान्त मानव के परम लक्ष्य के संदर्भ में
50. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त-बाल शिक्षा के संदर्भ में
51. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त : महिला शिक्षण के संदर्भ में

52. वैदिक शिक्षा चिन्तन और महिला शिक्षण की प्रक्रियाएँ
53. वैदिक शिक्षा एवं प्राचीन शिक्षा-शास्त्री
54. वैदिक महिला शिक्षा-शास्त्री और उनके सिद्धान्त
55. वैदिक शिक्षण की पद्धतियाँ और आधुनिक शिक्षण की विधियों का तुलनात्मक अध्ययन
56. वैदिक शिक्षा के सिद्धान्त और समकालीन भारतीय शिक्षा-शास्त्री : एक तुलनात्मक विवेचन
57. वैदिक शिक्षा में मनोविज्ञान की विवेचना
58. वैदिक शिक्षा में अधिगम प्रक्रिया और सिद्धान्त
59. वैदिक शिक्षा में अभिप्रेरण के प्रमुख सिद्धान्त
60. वैदिक शिक्षा में व्यक्तित्व एवं उसके मापन की विधियाँ
61. वैदिक शिक्षा में बुद्धि विवेचन एवं बुद्धि विकास के विभिन्न प्रकार
62. वैदिक शिक्षा में व्यक्तित्व का स्वरूप, अर्थ, परिभाषा और व्यवहार के संदर्भ में
63. वैदिक शिक्षा में व्यावसायिक शिक्षा
64. वैदिक शिक्षा में वातावरण का महत्व
65. वैदिक शिक्षा में सृजनात्मकता के सिद्धान्त
66. वैदिक शिक्षा का परम लक्ष्य
67. महर्षि दयानन्द और वैदिक शिक्षा
68. वैदिक शिक्षा में अभिरुचि और मनोविज्ञान के प्रमुख सिद्धान्त
69. वैदिक शिक्षा और भाषा अध्ययन
70. वैदिक शिक्षा और विज्ञान शिक्षण की विधियाँ
71. वैदिक शिक्षा और स्वास्थ्य चिन्तन
72. वैदिक शिक्षा में योग की भूमिका
73. वैदिक शिक्षा में आचार्य चिन्तन की भूमिका
74. स्मृतियों में शैक्षिक विचार - एक अध्ययन
75. वैदिक शिक्षा : वर्तमान अपेक्षायें और चुनौतियाँ
76. वैदिक शिक्षा : नारी सशक्तिकरण के संदर्भ में
77. वैदिक शिक्षा में मूल्यों की उपादेयता - एक समीक्षा
78. वैदिक शिक्षा : शिक्षक और शैक्षणिक तंत्र
79. 21वीं सदी में वैदिक शिक्षा - एक मूल्यांकन
80. विकास की दहलीज पर वैदिक शिक्षा की भूमिका
81. राजधर्म के परिप्रेक्ष्य में वैदिक शिक्षा
82. वैदिक शिक्षा : कृषि के संदर्भ में
83. वैदिक शिक्षा - शहरीकरण के संदर्भ में
84. वैदिक शिक्षा में एकाग्रता बोध
85. वैदिक शिक्षा में शारीरिक शिक्षा
86. वैदिक शिक्षा में अभिभावक की भूमिका
87. वैदिक शिक्षा तथा विद्यालय (गुरुकुल) प्रशासन
88. वैदिक शिक्षा में दीक्षान्त परम्परा के तत्व
89. वेदो में शैक्षिक निहितार्थ की प्रासंगिता
90. वैदिक शिक्षा का मूल्य तत्व - संस्कार शिक्षा - एक मौलिक चिन्तन
91. ब्राह्मण ग्रन्थों में शिक्षा के सिद्धान्त
92. वैदिक शिक्षा और समय की चुनौतियाँ
93. वैदिक शिक्षा और अनुसंधान - एक समीक्षा
94. वैदिक शिक्षा-सिद्धान्त बाल शिक्षा के लिए व्यापक उपागम - एक अध्ययन
95. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त - व्यवसायीकरण शिक्षा के संदर्भ में
96. वेदों में शिक्षा-सिद्धान्त - सामाजिक परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में
97. वैदिक शिक्षा और अध्ययन के विभिन्न विषय
98. वैदिक शिक्षा और गणित शिक्षण
99. वैदिक शिक्षा और कला के सिद्धान्त
100. वैदिक शिक्षा में कला शिक्षण
101. वैदिक शिक्षा और राज्य की भूमिका
102. वैदिक शिक्षा-शासन के संदर्भ में
103. वैदिक शिक्षा और मानव निर्माण
104. वैदिक शिक्षा में शिक्षक के कर्त्तव्य और दायित्वों की विवेचना
105. वैदिक शिक्षा - बुनियादी शिक्षा के ढाँचे के संदर्भ में
106. वैदिक शिक्षा में जीवन मूल्य
107. वैदिक शिक्षा - भाषा, समाज और संस्कृति के संदर्भ में
108. वैदिक शिक्षा में लिंग समानता
109. वैदिक शिक्षा में नैतिकता
110. वैदिक शिक्षा में मानव मूल्य
111. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त और समान शैक्षिक अवसर
112. वेदों में शिक्षा में गुणवत्ता और विषय-वस्तु
113. वेदों में शिक्षा सिद्धान्त और पाठ्यक्रम की गतिपरकता
114. वैदिक शिक्षा में पर्यावरण-उपागम - एक विवेचन
115. वेदों में शिक्षक-शिक्षा के मूल तत्त्व
116. वेदों में शिक्षा सिद्धान्त - इक्कीसवीं शताब्दी के लिए

# आचार्यः उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः

**प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार**

*प्रिय पाठको, 'परोपकारी' के पिछले अंक में आपने गुरुकुल के विषय में प्रो. सत्यव्रत 'सिद्धान्तालंकार' और स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती के स्वप्नों को पढ़ा। प्रो. सत्यव्रत जी के स्वलिखित अभिनन्दन ग्रन्थ से उद्धृत वह लेख स्वयं में दीपस्तम्भ है, परन्तु उसी पुस्तक का एक और लेख आज की परिस्थितियों में इतना अधिक प्रासंगिक है कि उसे यहाँ प्रकाशित किये बिना रह पाना असम्भव हो गया। 'परोपकारी' पाक्षिक पत्र चाहता है कि इन विचारों से जनचेतना का प्रारम्भ हो ताकि मानव निर्माण के मूल 'शिक्षा-व्यवस्था' को पुनः परिशुद्ध रूप प्रदान किया जा सके। इसी आशा और विश्वास के साथ ये लेख चिन्तनार्थ सादर प्रस्तुत है।* **-सम्पादक**

**पिछले अंक का शेष भाग....**

गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली के जिन मूल-सिद्धान्तों का ऊपर उल्लेख हुआ है उनके विषय में पूछा जा सकता है कि आज के परिवेश में क्या वे व्यावहारिक हैं? आज का गुरु गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति में अन्तर्निहित आदर्शों पर चलने को तैयार नहीं। वह प्राचीन गुरुओं जैसा तपस्यामय जीवन बिताना नहीं चाहता। उसे तप नहीं करना, दूसरों की तरह आराम की जिन्दगी बितानी है। उसे मकान चाहिए, एयरकण्डीशनर चाहिए, गीज़र और हीटर, रेडियो तथा टेलीविजन चाहिए। इसके लिए वेतन आये दिन बढ़ना चाहिए। शिष्य गुरु को न पिता समान मानते हैं न वैसा आदर दे सकते हैं। उनके लिए गुरु है एक सेवक जो वेतन के लिए नौकरी करता है। वह गुरु को वैसा सम्मान देने के लिए तैयार नहीं जैसा प्राचीन काल के गुरुकुलों के शिष्य अपने गुरुओं को दिया करते थे। जहाँ तक शिक्षा-संस्था में कुल भावना की अनुभूति का सम्बन्ध है, गुरु और शिष्य दोनों ही उसे मात्र टीचिंग-शॉप समझते हैं। हो भी यही रहा है कि जितना बड़ा विद्यालय उतनी बड़ी फीस। पब्लिक स्कूलों में पढ़ाया वही जाता है जो अन्य साधारण स्कूलों में, परन्तु पब्लिक स्कूल के नाम से फीस कई गुणा ज्यादा ली जाती है। पब्लिक स्कूल-एक ऐसा चालू सिक्का हो गया है जो बच्चों को अंग्रेजियत सिखाता है।

देश की ऐसी स्थिति में गुरुकुल के उन आदर्शों का गान करना कहाँ तक समयानुकूल तथा व्यावहारिक है? हम यह मानकर चलते हैं कि वर्तमान परिस्थिति में इन सिद्धान्तों को व्यापक रूप देना सम्भव नहीं है। हर स्कूल-कॉलेज को, हर यूनिवर्सिटी को इन आदर्शों पर नहीं चलाया जा सकता, क्योंकि इन आदर्शों से ओत-प्रोत अध्यापक मिलने सम्भव नहीं है। अध्यापक तो वैसे ही मिलेंगे-आजीविका के लिए अध्यापन-कार्य करने वाले, बच्चों का जीवन बनाने के लिए तप, त्याग और तपस्या करने वाले नहीं। इस कारण मानव-समाज में ऐसे व्यक्तियों का प्रवेश नहीं हो रहा जो सम्पूर्ण समाज को मानवीयता के गुणों से भर दें। मानव-समाज वैसा ही बनेगा जैसा शिक्षा-जगत् उसे बनायेगा। अगर शिक्षा-जगत् आदर्शहीन है, तो समाज आदर्श-प्रिय कैसे हो सकता है?

परन्तु क्या चक्र बदला नहीं जा सकता? क्या समाज में ऐसे इने-गिने भी व्यक्ति नहीं मिल सकते जो शिक्षा के उन सिद्धान्तों को क्रियात्मक रूप देना अपने जीवन का लक्ष्य समझें जिनका हमने 'गुरुकुल' नाम से उल्लेख किया है? संसार में भौतिकवादी ज्यादा तथा आदर्शवादी कम या इने-गिने हैं। विश्व में जितनी प्रगतिशील या आदर्शवादी विचारधारा उपजीं, आदर्शवाद की गंगोत्री से आगे बढ़कर गंगा का रूप धारण कर गई हैं। महात्मा गांधी ने नगण्य से खद्दर को ही केन्द्र बनाकर देश की गरीबी हल करने का आदर्श खड़ा कर दिया और सम्पूर्ण देश में खद्दर का आन्दोलन चल पड़ा। जगह-जगह खद्दर-भण्डार खुल गये और उन सब को एक सूत्र में बांधकर खद्दर तथा ग्रामोद्योग नाम की संस्था का जन्म हुआ है। इस आन्दोलन में हजारों आदर्शवादियों ने जीवन खपा दिया और खपा रहे हैं। शिक्षा के क्षेत्र में कुछ ऐसा ही गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली का आन्दोलन था।

**आदर्शहीन शिक्षा कैसी?** -शिक्षा किन्हीं आदर्शों को सामने रखकर दी जाती है। अंग्रेज भारत आये, राज-काज तथा जनता के बीच सम्पर्क स्थापित करने और शासन में सुविधा के लिए आंग्ल-शिक्षा-प्रणाली का सूत्रपात हुआ, जिसका श्रेय मैकाले को है। मैकाले की शिक्षा-प्रणाली से अंग्रेजों के पैर भारत में जम गये क्योंकि तब अंग्रेजी पढ़े-लिखों को ही नौकरी मिल सकती थी।

अंग्रेजी शिक्षा से एक लाभ भी हुआ। अंग्रेजी-शिक्षित व्यक्तियों का आंग्ल-साहित्य के द्वारा पाश्चात्य जगत् के स्वतन्त्रता-सम्बन्धी विचारों से सम्पर्क स्थापित हुआ और अंग्रेजों के पाँव जमने के साथ-साथ उनके पाँव उखड़ने के आन्दोलन का सूत्रपात हो गया। शिक्षित व्यक्तियों में स्वतन्त्रता की लालसा जाग उठी। इस युग में जन्मे अनेक आन्दोलनों में शिक्षा-प्रणाली का आन्दोलन भी मुख्य था। अंग्रेजों का उद्देश्य था-अंग्रेजी जानने वाले बाबुओं की भर्ती, अंग्रेजी शासन की नींव को दृढ़ बनाना और शिक्षित जन-मानस को अपनी संस्कृति एवं आदर्श से विमुख बनाना। गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली का आदर्श ऐसे व्यक्ति तैयार करना था जो प्राचीन वैदिक संस्कृति से ओत-प्रोत, भारतीय संस्कारों तथा आदर्शों को जीवन में घटाकर देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने को तैयार कर सकें। तब गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली का यह आन्दोलन देश के कोने-कोने में फैल गया। गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति का लक्ष्य यह था कि अंग्रेजों के लिए नौकर नहीं पैदा करना, बल्कि ऐसे व्यक्ति पैदा करना है जो भारतीय आदर्शों को जीवन में उतारकर यहाँ की संस्कृति और अन्ततोगत्वा भारत की स्वतन्त्रता की रक्षा कर सकें। इस शिक्षा-प्रणाली के संचालकों ने यह समझ लिया था कि बचपन की शिक्षा के आधार पर ही देश में भावी नागरिक उत्पन्न होंगे।

**सैनिकों की दिनचर्या**- इस प्रणाली का बीज ऋषि दयानन्दकृत 'सत्यार्थप्रकाश' में था, परन्तु इसे मूर्तरूप दिया महात्मा मुंशीराम जी ने। गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली का केन्द्र हरिद्वार के समीप रखा गया। जिस समय हरिद्वार के समीप काँगड़ी में गुरुकुल की स्थापना हुई, देश परतन्त्र था और परतन्त्रता के युग की प्रतिक्रिया का रूप ही शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल था। यद्यपि जिन सिद्धान्तों का उल्लेख हम पहले कर चुके हैं वे सिद्धान्त गुरुकुल के इस केन्द्र में आधारभूत रखे गये तथापि उन सिद्धान्तों के साथ-साथ परतन्त्रता के सूचक सब चिह्नों को मिटा देना भी इस संस्था का उद्देश्य था। उदाहरणार्थ, शिक्षा का माध्यम हिन्दी रखा गया और उसी में रसायन, गणित, ज्यामिति, भौतिकी आदि विषयों को भी पढ़ाया जाने लगा। इन विषयों पर हिन्दी में पुस्तकें प्रकाशित की गईं। विद्यार्थियों को घुड़सवारी, तीरन्दाजी आदि सिखायी गयी। विद्यार्थियों की दिनचर्या सैनिकों जैसी रखी गयी, प्रातःकाल चार बजे उठ जाना, सन्ध्या-उपासना के बाद भिन्न-भिन्न प्रकार के योगासन करना, दण्ड-बैठक-व्यायाम-कुश्ती करना जिससे शरीर पुष्ट हो, सर्दी-गर्मी सहना, जूता धारण न करना आदि को देखकर बरबस लोग कहते थे कि यहाँ तो सैनिक तैयार किये जाते हैं।

एक दिन उत्तरप्रदेश के होम-सेक्रेटरी गुरुकुल पधारे। मैं उन्हें छोटे बच्चों के आश्रम में ले गया। वहाँ दैनिक दिनचर्या का बोर्ड टँगा था जिसमें प्रातः ४ बजे से रात्रि ८ बजे तक सारा कार्यक्रम लिखा हुआ था। पन्द्रह मिनट तक प्रोग्राम को पढ़ने के बाद वे बोले, आप जेल-जीवन के लिए बच्चों को तैयार कर रहे हैं। सरकारी क्षेत्रों में प्रसिद्ध था कि गुरुकुल काँगड़ी में क्रान्ति के सैनिक तैयार किये जाते हैं। इसी किंवदन्ती को सुनकर लॉर्ड मेस्टन, लॉर्ड चेम्सफोर्ड तथा बरतानिया के प्राइम मिनिस्टर रैम्जे मैग्डॉनल्ड गुरुकुल देखने आये थे। वे लोग चाहते थे कि गुरुकुल सरकारी मदद ले ताकि क्रान्तिकारियों का दल गुरुकुल से उदासीन हो जाए। महात्मा मुंशीराम ने सरकार के हाथों बिकना अस्वीकार कर दिया। ऐसा था गुरुकुल और इसकी शिक्षा-पद्धति, स्वतन्त्रता-प्राप्ति से पूर्व।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद देश का रूप-रंग बदल गया, देशवासियों का उद्देश्य बदल गया व उसके अनुरूप गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति की सरकारी सहायता न लेने की नीति भी बदल गई। सरकार अपनी थी और चाहती थी गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति के मूल-सिद्धान्त बने रहें और इसके लिए गुरुकुल-पद्धति के संचालकों के हाथ दृढ़ किये जावें। खेद है कि सरकार ने जिस उद्देश्य से हमें आर्थिक सहायता देना शुरु किया उसे क्रियात्मक रूप देने में हम

सफल नहीं हुए क्योंकि हम भी बहाव के साथ बह गये।

**योजना देशव्यापी बन**- नि:सन्देह गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति के आधारभूत सिद्धान्त शिक्षा-क्षेत्र में सर्वमान्य हैं। गुरु का अपने छात्रों को पुत्रवत् मानकर उनके साथ जीवन बिताना, सब छात्रों का एक साथ रहना, परस्पर भाई-भाई का सम्बन्ध रखना, ऊँच-नीच, जाति-पाँति का भेदभाव न होना, जल्दी सोना, जल्दी उठना, संध्योपासना करना, तपश्चर्या तथा ब्रह्मचर्य का जीवन बिताना, सात्विक भोजन और व्यायामादि से शरीर को हृष्ट-पुष्ट बनाना। कौन-सी शिक्षा-पद्धति है जो इन बातों को स्वीकार न करेगी? इसी का नाम आश्रम-वास, गुरुकुल-वास है। इसी शिक्षा-पद्धति से मानव का, समाज, देश और विश्व का निर्माण हो सकता है। आज समय है कि हम इस दिशा में कदम बढ़ायें, परन्तु इसके लिए हमें गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति की देशव्यापक योजना बनानी पड़ेगी।

गुरुकुल काँगड़ी को विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त हो चुकी है, परन्तु इसमें गुरुकुलीयता नहीं आई। विश्वविद्यालय के छात्र साइकिलों पर चढ़कर बाहर से आते हैं और पढ़कर अपने-अपने घरों को चले जाते हैं। प्रोफेसरों का भी यही हाल है। गुरुकुल के क्वार्टर सस्ते हैं, इसलिये वे वहाँ रहते हैं, नहीं तो छात्रों के साथ उनका कोई नैत्यिक सम्बन्ध नहीं है। अन्य स्कूल-कॉलेजों की तरह वे पढ़ा कर अपने घर आ बैठते हैं। रहना-सहना उनका दूसरे अध्यापकों जैसा ही होता है। कोट-पतलून में रहते और स्कूटरों पर चढ़कर आते-जाते हैं। तपश्चर्या का वातावरण कहीं नहीं है। वे गुरुकुल में रहने वाले गुरु या आचार्य नहीं बल्कि लेक्चरार, रीडर तथा प्रोफेसर हैं। कोई ऐसा कदम उठाना होगा, ऐसी योजना बनानी होगी जिससे गुरुकुल विश्वविद्यालय वास्तविक अर्थों में देश या विश्वव्यापी गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति का प्रतीक बने।

गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति का मूलाधार तो गुरुकुल काँगड़ी ही है जिसे दो भागों में बाँटा जा सकता है। एक भाग तो वह, जो चालू पद्धति पर ही चल रहा है। दूसरा वह, जिसमें गुरुकुल-पद्धति के सिद्धान्त ही लागू हो रहे हैं, या हो सकते हैं। दूसरे भाग को गुरुकुल कहकर हम ग्रांट पहले भाग के लिए ले रहे हैं। पहले भाग में छात्रों की संख्या अधिक है, परन्तु वह नाममात्र का गुरुकुल है, दूसरे भाग में छात्रों की संख्या कम है, परन्तु यथार्थ में वही गुरुकुल है। इस गड़बड़झाले में से निकलने का उपाय यही है कि हम दूसरे भाग को इतना बढ़ायें कि उसमें पढ़नेवाले छात्र ही पहले भाग में प्रविष्ट हों और धीरे-धीरे स्थिति यह आ जाय कि पहले भाग में सिर्फ गुरुकुल में शिक्षा-प्राप्त ऐसे छात्र ही रह जायें जिन्होंने गुरुकुल के विद्यालय विभाग में शुरु से शिक्षा प्राप्त की हो। गुरुकुल काँगड़ी में विद्यालय-विभाग से विश्वविद्यालय-विभाग तक वही छात्र जायें जो गुरुकुल शिक्षा-पद्धति से पढ़ें हों, जिनका सोना-जागना, खाना-पीना, बोलना-चालना, वेश-भूषा-सब कुछ गुरुकुलीय हो। जब ऐसे छात्र जो ६-७ वर्ष की आयु से गुरुकुल में प्रविष्ट होकर शिक्षा-काल के अन्तिम समय तक गुरुकुल में ही रहते हुए पूर्ण शिक्षा प्राप्त कर निकलेंगे, तब गुरुकुल-शिक्षा का असली शुद्ध रूप निखरकर उभरेगा।

**केवल पुस्तक नहीं**- जहाँ तक पुस्तक-शिक्षा का प्रश्न है, हमें यह समझकर चलना चाहिए कि गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति वास्तव में जीवन की पद्धति है। शिक्षा के क्षेत्र में हम जहाँ संस्कृत-साहित्य, दर्शन तथा वेदादि प्राचीन ग्रन्थों एवं उनकी रिसर्च पर विशेष ध्यान देते हैं, वहाँ पाश्चात्य विद्वानों को भी पाठविधि में यथोचित स्थान देते हुए यह ध्यान रखते हैं कि हमारी शिक्षा गुरुकुलीय जीवन-पद्धति को अपना मूल समझे और जीवन-निर्माण की उस दिशा को सर्वत: मूर्धन्य समझे। गुरुकुल एक ऐसी संस्था बने जिसमें शिक्षा तथा जीवन के उन सिद्धान्तों को प्रधानता दी जाती हो जो व्यक्ति, समाज, देश तथा विश्व के उन्नयन के लिए आवश्यक हैं। इसमें ऐसे ही कार्यकर्त्ताओं का संग्रह हो जिनके जीवन में पूर्व-उल्लिखित वे मूल-तत्त्व ओत-प्रोत हों। जब हम गुरुकुल विश्वविद्यालय को इस स्थिति में लायेंगे तब अगला कदम उठाना होगा और वह कदम होगा गुरुकुल की जीवन-प्रणाली को शिक्षा-क्षेत्र में सर्वव्यापी बना देना।

किसी संस्था के सर्वव्यापी होने के लिए उसकी जड़ों और शाखाओं का देश तथा विश्व के कोने-कोने में फैलना आवश्यक है। विश्व में फैल जाने के पहले इस जीवन-

प्रणाली के देश भर में फैल जाने की जरूरत है। गुरुकुल जीवन-पद्धति का एक आन्दोलन है जिसका उद्देश्य उस मानव का निर्माण करना है जैसा हम समाज, देश और विश्व में देखना चाहते हैं। ऐसा मानव, जो अध:पतन के सब प्रलोभनों से मुक्त शुद्ध जीवन का निर्माण करे। इसके लिए नींव का काम गुरुकुल-जीवन-पद्धति के उन मूल-तत्त्वों को उभारने से ही किया जा सकता है अन्यथा शिक्षित होकर भी हम अशिक्षित ही रहेंगे। ऐसी जीवन-पद्धति को गुरुकुल विश्वविद्यालय में केन्द्र बनाकर उसकी शाखाएँ हर शहर, हर राज्य में खोलने की योजना को देशव्यापक रूप देने से ही नव-मानव का निर्माण हो सकता है। देशव्यापी गुरुकुल विश्वविद्यालय से सम्बद्ध गुरुकुलों में एक प्रकार से इस विश्वविद्यालय की शाखाओं में क्या पढ़ाया जाय, वह सरकार के शिक्षा मन्त्रालय पर छोड़ देना चाहिए ताकि पुस्तकीय शिक्षा की दृष्टि से गुरुकुलीय विश्वविद्यालय तथा अन्य विश्वविद्यालयों में छात्रों का आदान-प्रदान तथा शैक्षणिक सम्पर्क बना रहे। देश की आवश्यकता पुस्तकीय शिक्षा के साथ-साथ गुरुकुलीय जीवन के सिद्धान्तों को व्यापक रूप देने की है। सिर्फ पुस्तकीय शिक्षा से जीवन नहीं बनता। पुस्तकीय शिक्षा के साथ-साथ गुरुकुलीय जीवन की शिक्षा देने से ही जीवन बन सकता है। इसलिए, गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति को, जो जीवन की एक पद्धति है, देशव्यापी बनाने की आवश्यकता है।

**'सत्य की खोज' पुस्तक से साभार**

## अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

## आचार्य धर्मवीर जी की स्मृति में स्थिर-निधि

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

**मन्त्री**

# अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

**सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।**

***प्रात: एवं सायं दैनिक यज्ञ***- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति नि:शुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था नि:शुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का नि:शुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा नि:शुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ नि:शुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में नि:शुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

***अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।***

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अत: आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

## अतिथि यज्ञ के होता

### ( ०१ से १५ अगस्त २०१७ तक )

१. श्री वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर २. जेनिथ एन्टरप्राइजेज़, दिल्ली ३. तूलिका साहू, चित्तौड़गढ़ ४. श्री अवनीश कपूर, दिल्ली ५. डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली व श्रीमती कमला देवी, अजमेर ६. श्री अवधेश कुमार, अम्बेडकर नगर ७. श्रीमती खजानी देवी, रोहतक ८. श्री नन्दकिशोर काबरा, अजमेर ९. श्री ज्ञानप्रकाश कुकरेजा, करनाल १०. स्वास्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती ११. श्री ज्योतिर्देव, उत्तरकाशी १२. श्रीमती सत्यवती देवी, उत्तरकाशी १३. श्री एम.एल. गोयल, अजमेर।

**- परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

## गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

## ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

### ( ०१ से १५ अगस्त २०१७ तक )

१. श्री नत्थू, कोटपूतली, जयपुर २. श्री वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर ३. श्रीमती कौशल्या देवी व श्री रोशनलाल, अजमेर ४. कै. चन्द्रप्रकाश त्यागी व श्रीमती कमलेश त्यागी, हरिद्वार ५. श्री मोहित, फिरोजपुर झिरका ६. डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली व श्रीमती कमला देवी, अजमेर ७. श्री सुभाष भट्टड़, अजमेर ८. श्री महेश सोनी, बीकानेर ९. श्री धीरपाल आर्य, बादली, झज्जर १०. श्री नरेन्द्र सोनी, सीकर ११. श्री ओमवीर सिंह, अजमेर १२. श्री उत्तम चन्द माहेश्वरी, अजमेर १३. श्री रमेश, बीकानेर १४. श्री ओंमकार शर्मा, मुरैना १५. श्रीमती पुष्पलता उपाध्याय, अजमेर १६. श्री नारायण सिंह, चांपानेरी १७. श्री नरेन्द्र कुमार मारू, उज्जैन।

**- परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

# विशेष सूचना

परोपकारी-पत्रिका के सभी पाठकों एवं आर्यजनों से निवेदन है कि डॉ. धर्मवीर जी से सम्बन्धित कोई पत्र, चित्र, ऑडियो, वीडियो आदि आपके पास हों तो कृपया हमें सूचित करें।

डॉ. धर्मवीर जी के जीवन पर प्रकाशित होने वाली स्मारिका के लिए जिन भी महानुभावों के पास उनसे सम्बन्धित कोई भी संस्मरण, विचार या कविता आदि हों, वे भी अतिशीघ्र सभा को भेजने का कष्ट करें, ताकि आपके लेख स्मारिका में प्रकाशित किये जा सकें।

**सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४**

**ई-मेल-psabhaa@gmail.com**

**परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज,**

**अजमेर-३०५००१ ( राज. )**

# शङ्का समाधान – ८

डॉ. वेदपाल, मेरठ

**शङ्का-१.** एक अकेला यज्ञकर्त्ता घी की आहुतियाँ ही देकर यज्ञ सम्पन्न करे। नहीं तो कहाँ घी की आहुतियाँ रोक कर सामग्री की डाले और फिर कहाँ-कहाँ घी और कहाँ-कहाँ सामग्री का प्रयोग करे?

२. शिवसंकल्प के छ: मन्त्रों की ऋषि जी ने सत्यार्थ प्रकाश में व्याख्या करी है। मन जड़ पदार्थ है। लिखा है दूर-दूर जाता है-मुझे ले जाता है और फिर एक मन्त्र में लिखा है कि ''चित्त चेतन सा विदित होता है।''

**-आर.के. अरोरा, दिल्ली।**

**समाधान-१.** आपकी शङ्का का आधार-यज्ञकर्त्ता एक तथा हव्य पदार्थ दो (१ घृत+१सामग्री=२) होने को लेकर है। साथ ही कौन सी आहुति घृत की होंगी तथा कौन सी आहुति सामग्री की?

प्रथम यज्ञकर्त्ता एक (एक अकेला यज्ञकर्त्ता) को समझ लें-आपकी शङ्का मुख्यत: गृहस्थ में पति/पत्नी के यज्ञ में अनुपस्थित होने पर अकेले पत्नी/पति द्वारा आहुति प्रदान को लेकर है, क्योंकि ब्रह्मचारी तो सदैव तथा वानप्रस्थ भी प्राय: अकेले ही रहेंगे। शास्त्रकार पति-पत्नी दोनों को मिलाकर भी एक यजमान ही मानते हैं, किन्तु तब दोनों के आहुति देने पर आपकी शङ्का नहीं रहती है। अकेला दो पदार्थ की आहुति किस प्रकार दे, यही आपकी दृष्टि में कठिनाई है। इस सन्दर्भ में संस्कार विधि के गृहाश्रम-विधि के अग्निहोत्र प्रकरण में दी गई पाद टिप्पणी निम्नवत् है-

''किसी विशेष कारण से स्त्री वा पुरुष अग्निहोत्र के समय दोनों साथ उपस्थित न हो सकें तो एक ही स्त्री वा पुरुष दोनों की ओर का कृत्य कर लेवे अर्थात् एक-एक मन्त्र को दो-दो बार पढ़के दो-दो आहुति करे।''

यह भी स्मरणीय है कि महर्षि दयानन्द से पूर्व हव्य के रूप में वर्तमान में प्रचलित सामग्री (कतिपय शुष्क पदार्थों का मिश्रण) का प्रयोग उपलब्ध नहीं होता है। महर्षि ने यज्ञ का प्रवृत्ति निमित्त लौकिक कामनाओं (धन, पुत्र, विजय आदि की प्राप्ति तथा शत्रुनाश आदि) के स्थान पर ईश्वर की उपासना के साथ पर्यावरण-जलवायु की शुद्धि का जीवमात्र को सुख की प्राप्ति प्रतिपादित किया है। तद्यथा-

**''अग्नये परमेश्वराय जलवायुशुद्धिकरणाय च होत्रं हवनं यस्मिन् कर्मणि क्रियते 'तदग्निहोत्रम्'। सुगन्धपुष्टि-मिष्टबुद्धिवृद्धिशौर्य धैर्यबलकरैर्रोगनाशकैर्गुणैर्युक्तानां द्रव्याणां होमकरणेन वायुवृष्टिजलयोः शुद्ध्या पृथिवीस्थपदार्थानां सर्वेषां शुद्धवायुजलयोगा-दत्यन्तोत्तमतया सर्वेषां जीवानां परमसुखं भवति''**

-पञ्चमहायज्ञविधि: अग्निहोत्रप्रकरणम्।

अत: महर्षि ने हव्य में भी सुगन्धित, पुष्टिकारक, मिष्ट तथा रोगनाशक-इन चार प्रकार के द्रव्यों का विधान किया है। इनके मिश्रित पाक को महर्षि ने शाकल्य तथा सामग्री नाम से अभिहित किया है-द्र.संस्कारविधि-सामान्यप्रकरण।

शङ्काकर्त्ता की यह शङ्का कि-यज्ञकर्त्ता कहाँ घी की आहुति दे और कहाँ सामग्री और कहाँ दोनों की। इस सन्दर्भ में महर्षि के मन्तव्यानुसार दैनिक यज्ञ की विधि निम्न प्रकार है-

समिदाधान के अनन्तर जलसिञ्चन करके आघारावाज्यभागाहुति (अग्नये स्वाहा आदि चार मन्त्रों द्वारा) घृत की होंगी। इसके पश्चात् दैनिक यज्ञ की आहुतियाँ घृत व सामग्री दोनों से देनी चाहिए। केवल सामग्री (घृत रहित) की कोई आहुति दैनिक यज्ञ में नहीं है।

विशिष्ट/नैमित्तिक यज्ञ जो किसी विशेष अवसर अथवा किसी निमित्त (यथा-नामकरण आदि संस्कार) से किए जाते हैं, उनमें विधि तथा हव्य तत्तद् संस्कार के अनुसार होंगे।

इन विशिष्ट नैमित्तिक यज्ञों के अवसर पर दैनिक यज्ञ का विधान नहीं है, किन्तु दैनिक यज्ञ नित्य कर्त्तव्य है। यदि वह नहीं किया गया है, तब इन (नैमित्तिक) से पूर्व किया जा सकता है, इनके मध्य में नहीं। दैनिक की विधि एवं हव्य दैनिक के अनुसार तथा नैमित्तिक की विधि-हव्य भिन्न होगा। यथा-सीमन्तोन्नयन तथा उपनयन दोनों का हव्य (शाकल्य-सामग्री) पृथक्-पृथक् है।

**२. 'लिखा है दूर-दूर जाता है-मुझे ले जाता है'** वाक्य में ''मुझे ले जाता है'' इतना अंश महर्षि व्याख्यात अर्थ में नहीं है। आपका प्रश्न है-मन जड़ होते हुए दूर-दूर किस प्रकार जाता है?

मन यद्यपि जड़ पदार्थ है, किन्तु आत्मा को कर्म करने के लिए साधन के रूप में उपलब्ध है। यहाँ मन का दूर-दूर जाना किसी भौतिक अथवा चेतन पदार्थ के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के सदृश नहीं है, अपितु अन्त:करण की सङ्कल्प-विकल्पात्मिका वृत्ति का दूरस्थ विषयों का स्मरण करना अभिप्रेत है।

**'चित्त चेतन विदित होता है'** कहने का अभिप्राय चेतन प्रतिपादित करना नहीं है, अपितु आत्मा की प्रेरणा से जड़ होते हुए भी बाह्य विषयों का ग्राहक तथा ज्ञान की उपलब्धि का साधन-करण होने के कारण चेतन प्रतीत होता है। वस्तुत: चेतन नहीं है। निघण्टु ३. ९ में चित्त पद प्रज्ञा नाम में पठित है। निरुक्त १.३ में **'चित्तं चेतते:'** कहा है। योग दर्शन में चित्त शब्द मन और चित्त दोनों के लिए प्रयुक्त हुआ है-द्र. यो. द. ४.५ पर म. नारायण स्वामी भाष्य। कार्य भेद से मन, बुद्धि, चित्त को पृथक्-पृथक् कहा जाता है, किन्तु अनेकत्र इनमें भेद प्रतिपादित न कर किसी एक नाम से भी कहा गया है।

# गुरुकुलों को छात्रवृत्ति

स्वामी विद्यानन्द जी सरस्वती (अधिष्ठाता गुरुकुल गदपुरी, जिला पलवल, हरियाणा) ने अपने वैदिक प्रचार ट्रस्ट के द्वारा परोपकारिणी सभा में एक स्थिर निधि बनाई, जिसका उद्देश्य आर्य समाज की शैक्षणिक संस्थाओं (गुरुकुलों) को आर्थिक सहयोग प्रदान करना है। इस स्थिर निधि से प्राप्त ब्याज से परोपकारिणी सभा प्रतिवर्ष गुरुकुलों को छात्रवृत्ति प्रदान करती है। गत वर्ष कुल १,२५,१४९ रु. की छात्रवृत्ति दी गई, जिसका विवरण निम्न प्रकार है-

| क्र. सं. | संस्था का नाम | देय राशि |
|---|---|---|
| 1. | गुरुकुल गदपुरी<br>जिला पलवल, हरियाणा | 21,000/- |
| 2. | आर्ष कन्या गुरुकुल ट्रस्ट<br>हसनपुर, पलवल, हरियाणा | 10,000/- |
| 3. | गुरुकुल महाविद्यालय<br>पूठ, बहादुरगढ़, हापुड़ (उ.प्र.) | 10,000/- |
| 4. | आर्ष गुरुकुल दाधिया<br>जिला अलवर, राज. | 10,000/- |
| 5. | श्री सर्वदानंद संस्कृत महाविद्यालय,<br>साधु आश्रम, अलीगढ़ | 10,000/- |
| 6. | टंकारा ट्रस्ट<br>ऋषि दयानन्द की जन्मभूमि, गुजरात | 10,000/- |
| 7. | गुरुकुल भादस मेवात<br>जिला मेवात, हरियाणा | 10,000/- |
| 8. | आर्ष कन्या गुरुकुल, शिवगंज | 10,000/- |
| 9. | गार्गी कन्या गुरुकुल, चाँमड़,<br>पोस्ट धैंया, अलीगढ़, उ.प्र. 202124 | 10,000/- |
| 10. | परोपकारिणी सभा,<br>केसरगंज, अजमेर, राज. | 11,000/- |

4625/- (शेष ब्याज की राशि परोपकारिणी सभा को अतिथि यज्ञ के लिए दी जायेगी।

विद्या की वृद्धि हेतु दिये इस सराहनीय सहयोग के लिये परोपकारिणी सभा स्वामी विद्यानन्द जी का धन्यवाद करती है।

# लोकोत्तर धर्मवीर-५

-तपेन्द्र वेदालंकार, आई.ए.एस. (रिटायर्ड)

महर्षि दयानन्द जी महाराज के ग्रन्थ लाजरस कम्पनी के छापेखाने में छपा करते थे, परन्तु इसमें असुविधा होती थी अत: महाराज अपना छापाखाना स्थापित करना चाहते थे। १२ फरवरी १८८० को (काशी के) लक्ष्मी कुण्ड पर वैदिक यन्त्रालय की स्थापना हुई। इसकी स्थापना का प्रस्ताव सबसे प्रथम आर्य समाज मुरादाबाद ने किया था। फिर आर्य समाज मेरठ ने अपने 'आर्य समाचार' मासिक पत्र द्वारा उसका समर्थन किया और ४२८ रुपये सहायतार्थ दिये। राजा जयकिशन दास ने भी उसकी धन से सहायता की थी। आर्य समाज फर्रुखाबाद ने भी १८०० रुपये एक बार और १३५० रुपये दूसरी बार दिये थे। जब वैदिक यन्त्रालय खुला तो महाराज ने मुंशी बख्तावर सिंह को शाहजहाँपुर से बुलाकर ३० रुपये मासिक पर उसका प्रबन्धकर्त्ता नियत किया। उस समय महाराज ने खेद प्रकाशित करते हुए कहा कि आज हम पतित हो गये, आज हम गृहस्थ हो गये। (महर्ष दयानन्द चरित)

ऋषि की मृत्यु के दो मास बाद अजमेर में परोपकारिणी सभा का पहला अधिवेशन हुआ। २८ दिसम्बर को दोपहर दो बजे मेयो कॉलेज में बनी मेवाड़ दरबार की कोठी में ऋषि की वसीयत के ट्रस्टी इकट्ठे हुए।...........वैदिक प्रेस के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि उसे यथासम्भव शीघ्र ही प्रयाग से अजमेर लाया जाये। प्रेस के प्रबन्ध के लिए राय बहादुर रानाडे, ठाकुर साहिब मसौदा, रा.ब. सुन्दरलाल कविराज श्यामल दास, पं. मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या तथा प्रधान आर्य समाज अजमेर की उपसमिति बनायी गयी। वेद भाष्य की छपाई की देखरेख के लिए पं. भीमसेन और पं. ज्वालादत्त को वेतन पर रखा गया। (आर्य समाज का इतिहास, पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति)

वैदिक यन्त्रालय एक अप्रैल १८९१ को अजमेर आया। यन्त्रालय में कई प्रिंटिंग मशीनें विदेशी थीं, जिनकी आज एन्टीक वेल्यू है। सैकड़ों कर्मचारी काम करते थे। भारतीय रेलवे का काफी काम वैदिक यन्त्रालय में होता था। ऋषि ग्रन्थों की छपाई का काम तो होता ही था। कालान्तर में ऐसी स्थिति आई कि काम कम होता गया तथा मशीनें खड़ी रह गयीं। आचार्य धर्मवीर जी के साथ एकाधिक बार यन्त्रालय की विजिट मैंने भी की थी। वैदिक यन्त्रालय को प्रेस म्यूज़ियम बनाने का विचार हुआ था, सहमति भी थी, परन्तु प्राथमिकताएँ उस समय दूसरी थीं। एक से अधिक बार यह बात उठी कि वैदिक यन्त्रालय में वर्तमान में कार्यरत एकमात्र मशीन से प्रिंटिंग न कराकर बाजार से पत्रिका आदि प्रिंट करा ली जावे। धर्मवीर जी सहमत नहीं हुए तथा बोले कि यदि सभा यन्त्रालय को बढ़ा नहीं पाई तो क्या उसके अस्तित्व को ही मिटा दिया जावे। समय आवेगा, मशीन बढ़ेंगी, काम बढ़ेगा तो संभव है वैदिक यन्त्रालय फिर से गरिमामय स्थिति को प्राप्त हो। वैसे भी धर्मवीर जी संस्थाओं की सम्पत्ति किसी को देने या बेचने के खिलाफ थे।

ऋषि मेले के अवसर पर वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार का कार्य तो किया ही जाता है, इसके साथ-साथ श्री मोहनलाल जी मोहित द्वारा स्थापित 'अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ' जिसके महामन्त्री श्री सत्यानन्द जी हैं, के आर्थिक सहयोग से वर्ष १९८८ से वेद गोष्ठियों का आयोजन प्रति वर्ष होता आ रहा है। ११९ वें प्रतिवेदन के अनुसार २५ गोष्ठियों का आयोजन हो चुका है। आचार्य धर्मवीर जी १९८५ में परोपकारिणी सभा के सभासद् थे तथा २०१६ तक देहावसान पर्यन्त संयुक्त मन्त्री, मन्त्री, कार्यकारी प्रधान, तथा प्रधान के पद पर रहे थे। गोष्ठी प्रारम्भ होने से बाद के कई वर्षों तक गोष्ठी का जिम्मा आचार्य धर्मवीर के कन्धों पर ही रहा। जिस समय उत्सव का विशाल रूप होने लगा तो गोष्ठी का संचालन करने की एकबारगी समस्या आयी, तब डॉ. सुरेन्द्र कुमार व अन्य विद्वानों ने गोष्ठी के संचालन का कार्य संभाला। आचार्य धर्मवीर जी मूलत: विद्वान् थे तथा विद्वद् गोष्ठी उनका प्रिय विषय होना ही था। उन्होंने पूर्ण प्रयास करके वेद गोष्ठी को ऊँचाइयों तक पहुँचाया। उनके प्रयास से वेद गोष्ठी का स्तर वर्ष-प्रतिवर्ष बढ़ता गया तथा विद्वानों के खोजपूर्ण विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन गया। विद्वानों के निबन्धों को पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जाने लगा। पिछले कुछ वर्षों से श्रेष्ठ निबन्धों को प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार दिये जाने लगे। प्रथम वर्ष प्रथम पुरस्कार डॉ. वेदप्रकाश जी दिल्ली विश्वविद्यालय,

द्वितीय पुरस्कार डॉ. कृष्णपाल सिंह जी जयपुर तथा तृतीय पुरस्कार डॉ. वेदपाल जी मेरठ को प्रदान किया गया। इस प्रकार डॉ. धर्मवीर जी के निरन्तर प्रयास से ऋषि मेला विद्वानों का मेला बनता चला गया।

वैदिक विद्वान् व आर्य समाज के कार्यकर्त्ता, ऋषि-ऋण चुकाने के लिए अपने परिश्रम व स्वत: प्रेरणा से लेखन व प्रचार आदि कार्यों में रत रहते हैं, वे स्वयं अपने सम्मान की अभिलाषा नहीं रखते, परन्तु आर्यजनों का यह दायित्व है, कर्त्तव्य है कि वे अपने विद्वानों को जानें, पहचानें, उन्हें व्यक्तिश: आदर दें तथा उनके पुरुषार्थ के लिए उनका सार्वजनिक सम्मान करें। परोपकारिणी सभा द्वारा विद्वानों, आचार्यों, कार्यकत्ताओं, स्नातकों को सम्मानित करने की परम्परा प्रारम्भ की गयी। पहला सम्मान डॉ. मुमुक्षु आर्य द्वारा स्थापित स्थिर निधि से दिया गया था। आचार्य धर्मवीर जी की प्रेरणा व सहमति से ऋषि के १२५ वें बलिदान दिवस पर 'रघुवरसिंह सुधारक वेदोपाध्याय' पुरस्कार प्रारम्भ हुआ। उसके बाद तो 'डॉ. प्रियव्रत वेद-वेदाङ्ग पुरस्कार' 'विश्वकीर्ति आर्य युवक कार्यकर्त्ता पुरस्कार', 'दीपचन्द आर्य धर्मार्थ न्यास पुरस्कार' 'श्री रामकृष्ण साधक जी द्वारा वेदगोष्ठी के विद्वानों एवं यजुर्वेद स्मरणकर्त्ताओं हेतु पुरस्कार राशि' स्वामी देवेन्द्रानन्द जी व स्वामी आशुतोष जी परिव्राजक द्वारा विद्वानों के सहयोग हेतु राशि, स्वामी अमृतानन्द सरस्वती द्वारा गुरुकुल के योग्य स्नातकों हेतु राशि, श्रीमती सुगनी देवी ईनाणी आर्ष छात्रवृत्ति राशि आदि बीस से अधिक पुरस्कार, राशि, व छात्रवृत्तियाँ ऋषि मेले के अवसर पर सभा द्वारा प्रदान की जा रही हैं।

इस श्रृंखला में आचार्या मेधा देवी जी, आचार्य विजयपाल जी विद्यावारिधि, स्वामी प्रणवानन्द जी, आचार्य प्रद्युम्न जी, आचार्य ब्रह्मदत्त जी, आचार्य वेदव्रत जी-मारकण्डा, आचार्य राजेन्द्र जी-कालबा, आचार्य अभयदेव जी, पं. राजवीर जी शास्त्री, आचार्य उदयन जी, स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी, आचार्य सनत् कुमार जी, आचार्य वेदव्रत जी-सोनीपत, डॉ. सुरेन्द्रकुमार जी, आचार्य सत्यानन्द जी वेदवागीश, डॉ. प्रशस्य मित्र जी शास्त्री, डॉ. आनन्दप्रकाश जी (तेलंगाना), डॉ. कमलेश जी शास्त्री आदि विद्वानों को सम्मानित किया जा चुका है, जो सभा के साथ-साथ निष्काम आचार्यों, विद्वानों, उपदेशकों के प्रति आचार्य धर्मवीर जी की श्रद्धा व सम्मान का परिचायक है।

वेद-प्रचार एवं चरित्र-निर्माण की अनेक विधाओं का आश्रय आचार्य धर्मवीर जी ने लिया। आर्य वीर दल का शिविर १९८० के दशक में लगा, श्री यतीन्द्र शास्त्री के निर्देशन में। व्यय आ गया लगभग चालीस हजार। तब धर्मवीर जी पुस्तकाध्यक्ष थे। सभा के संयुक्त मन्त्री ने अगले वर्ष शिविर की अनुमति नहीं दी क्योंकि उस समय चालीस हजार की राशि बहुत बड़ी राशि थी। धर्मवीर जी के ध्यान में आया, तब उन्होंने कहा-शिविर लगा लो। शिविर लगा, सभा को उन्होंने स्वीकृति देने को सहमत किया। तब से निरन्तर प्रतिवर्ष शिविरों का आयोजन होता आ रहा है। वर्तमान में भी प्रतिवर्ष आर्य वीर दल एवं आर्य वीरांगना शिविरों का आयोजन होता है, जिसमें सैकड़ों युवक, युवतियाँ चरित्र-निर्माण व वैदिक-धर्म की शिक्षा लेकर जाते हैं। इसी प्रकार संस्कृत शिक्षा के प्रसार के लिए परोपकारिणी सभा तथा लोकभाषा प्रचार समिति राजस्थान के संयुक्त तत्त्वावधान में आवासीय संस्कृत सम्भाषण शिविरों का आयोजन होता रहा। 'सिद्धान्तों की गहरी जानकारी तथा उनके प्रति व्यक्तिगत निष्ठा उत्पन्न करने' के लक्ष्य को ध्यान में रखकर प्रतिवर्ष वर्ष में दो बार योग शिविरों का आयोजन पिछले कई वर्षों से होता आ रहा है, जिसमें आर्यजन अपनी ज्ञान-पिपासा के साथ-साथ योग-जिज्ञासा का भी समाधान पाते हैं। धर्मवीर जी के सभा मन्त्री कार्यकाल में आचार्य सत्यजित् जी के सहयोग से 'वैदिक ध्यान पद्धति' का निर्धारण हुआ जो आर्यजगत् के लिए विशेष उपलब्धि है, क्योंकि इससे पूर्व कोई निर्धारित पद्धति नहीं थी तथा प्रशिक्षक अपने-अपने ढंग से ध्यान कराते थे।

वैदिक धर्म प्रेमियों में तो आचार्य धर्मवीर जी के प्रति सम्मान व प्रेम है ही, अन्य मतावलम्बी भी उनके प्रति गहरा सम्मान रखते थे। सिन्धी समाज के अति पूज्य सन्त थे श्री हृदयराम जी महाराज, वे वीतराग थे, तपस्वी थे। उनका एक आश्रम पुष्कर में भी है। एक बार मैं व आचार्य धर्मवीर जी उनके पुष्कर स्थित आश्रम में गये, मैं भी सामान्य व्यक्ति की तरह गया। एक लकड़ी की बैंच पर महाराज जी विराजे थे, ऊँचा कटिवस्त्र पहने, सामने तीनों ओर पंक्तिबद्ध श्रद्धालु भूमि पर बैठे थे। आचार्य धर्मवीर जी को देखते ही उन्होंने उनका सम्मानपूर्वक स्वागत किया, प्रेम से कुछ चर्चा भी की। जबकि वे अनावश्यक न बोलते

थे, न सुनते थे। उनके मुँह से निकले शब्द उनके अनुयायियों के लिए आदेश थे। चलते समय भी आचार्य धर्मवीर को सम्मानपूर्वक विदा किया। आर्यों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि सन्त श्री हृदयराम जी महाराज की सत्प्रेरणा व आशीर्वाद तथा उनके अनुयायियों, शिष्यों के सहयोग से पिछले २०-२१ वर्षों से प्रतिवर्ष वृष्टि-यज्ञ ऋषि उद्यान की यज्ञशाला में उत्साह एवं श्रद्धापूर्वक होता चला आ रहा है।

ऋषि उद्यान में कमरे बनने प्रारम्भ हुए तो लोगों ने पूछा कि क्या विद्यालय खोलोगे? कॉलेज खोलोगे? धर्मवीर जी ने कहा- नहीं। फिर इतने कमरों का क्या करोगे? धर्मवीर जी ने कहा कि आर्य समाज के वानप्रस्थी, साधु-संन्यासी जब आर्य समाजों या गृहस्थों में प्रचार करने जाते हैं तो कार्यक्रम की समाप्ति पर उनसे पूछ लिया जाता है कि स्वामी जी आगे का कार्यक्रम क्या है? मतलब साफ कि कब जाओगे? यदि साधु-संन्यासी आराम करना चाहें तो कहाँ करें? उनके लिए ये सब कमरे बनाये हैं, जिससे वे अपने प्रचार-कार्यक्रमों के बीच में कुछ दिन आराम करना चाहें तो सम्मानपूर्वक कर सकें।

आचार्य धर्मवीर जी अक्सर कहते थे कि गृहस्थ की जिम्मेदारियाँ जिनकी पूरी हो गयी हैं, उन वानप्रस्थियों को ऋषि उद्यान आकर रहना चाहिये। अपनी सामर्थ्य अनुसार समाज का कार्य करना चाहिये। किसी ने पूछा, आप कितने दिन रहने की अनुमति देंगे, क्या काम करना होगा? धर्मवीर जी का कथन था कि आप आकर १० दिन, १५ दिन, महीना रहो, देखो कि अनुकूल लग रहा है या नहीं। यह आपका घर है। अपने घर की तरह अपनी योग्यतानुसार जो और जितना कार्य करना चाहें-करें। एक वानप्रस्थी जी को उन्होंने ऋषि उद्यान आने के लिए कहा। वानप्रस्थी जी आ गये। तीसरे दिन वानप्रस्थी जी पूछने आये कि मुझे जाने को कब कहोगे? संस्था वाले ऐसा ही करते हैं। धर्मवीर जी का उत्तर श्लाघनीय था। बोले-जब आप ऋषि उद्यान आयें तो पाचक को बात दें, जिससे भोजन व्यवस्था हो जावे, जब ऋषि उद्यान से जावें तो भी पाचक को बता दें। हमारी तो इतनी ही बाध्यता है। आचार्य धर्मवीर जी का हास्य भी तीखा था-बोले-मैं जब ऋषि उद्यान से भेजूंगा तो एक कनस्तर घी और एक बोरी सामग्री के साथ भेजूंगा और दोबारा आओगे ही नहीं अर्थात् जीवनपर्यन्त यहीं रखूँगा।

एक विशेषता की ओर ध्यान आकर्षित नहीं करना भूल होगी। आज आर्यसमाज में एक-एक संस्थाओं की कई-कई संस्थाएँ बन रही हैं। पता नहीं चलता कि कौन सी असली है। आपसी मुकदमेबाजी भी खूब है। जो श्रम व पैसा समाज-कल्याण के लिए लगना चाहिए था वह मुकदमेबाजी में लग रहा है। स्वाभाविक है, आपसी भाई-चारा भी इस प्रकार की संस्थाओं में कम हो जाता है, परन्तु परोपकारिणी सभा की यह विशेषता रही कि संस्था संगठन को लेकर कोई मुकदमेबाजी नहीं हुई, एक की दो सभाएं नहीं हुईं। संस्थाओं में आपसी मतभेद तो हो सकते हैं, लोकतान्त्रिक संस्थाओं में यह दोष नहीं है, परन्तु सभा में मतभेद निम्नतम स्तर पर रहे। इसका श्रेय सभा प्रधानों के साथ-साथ आचार्य धर्मवीर के कुशल प्रबन्धन, भविष्य चिन्तन, संस्था हितानुकूल स्पष्ट निर्णय तथा सहिष्णुता को जाता है। यह भी एक कारण रहा कि परोपकारिणी सभा ने सभी क्षेत्रों में सफलता प्राप्त की।

परोपकारी पत्रिका के सम्पादकीय में पत्रकार धर्मवीर की उत्कृष्ट पत्रकारिता के दर्शन होते थे। किसी विषय का अस्पष्ट लिखना तो वे जानते ही नहीं थे, चाहे कोई नाराज हो या प्रसन्न। स्वामी विवेकानन्द पर उन्होंने लेख लिखा था तथा कड़वी सच्चाई को उजागर किया था। राजनीति पर लिखते तो राजनीतिज्ञ तिलमिला जाते थे। आरक्षण जैसे विषय पर भी लिखते थे तो एक अलग चिन्तन साफ झलकता था। विदेश नीति जैसे गूढ़ विषय, जिन पर संस्कृत विद्वानों का अधिकार कम देखने को मिलता है-उनमें उन्हें प्रवीणता प्राप्त थी। सभी प्रकार के सामाजिक विचलनों, वर्तमान समस्याओं का सिद्धान्त के आधार पर किया गया उनका विश्लेषण अद्वितीय होता था, हृदयगम्य होता था, रास्ता दिखाने वाला होता था।

हम अपने संन्यासियों, विद्वानों, उपदेशकों, बलिदानियों के जीवन-चरित्र को इसलिए पढ़ते हैं कि उनके जीवन की घटनाओं से जीवन जीने की कला आती है तथा किन परिस्थितियों में क्या निर्णय लेना है- इस क्षमता में वृद्धि होती है। हमें अपने इतिहास पर, इतिहास पुरुषों पर गर्व तो होता ही है। यदि जीवन में कोई कठिन परिस्थिति आती है तो विद्वान् तो सम्भवत: अपनी विद्वत्ता से उसका रास्ता खोज सकता हो, परन्तु सामान्य जनों को तो **''ये तत्र ब्राह्मणा: सम्मदार्शिना युक्ता अयुक्ता अलूक्षा धर्मकामा:**

र्युयथा ते तत्र वर्त्तेरन्। तथा तत्र वर्तेथा।" तैत्तिरीय उपनिषद् के इस वाक्य का ही आश्रय लेना पड़ता है। महर्षि के शब्दों में, जब कभी तुझ को कार्य वा शील तथा उपासना-ज्ञान में किसी प्रकार का संशय उत्पन्न हो, तो जो भी समदर्शी पक्षपातरहित, योगी, अयोगी, आर्द्रचित्त, धर्म की कामना करने वाले धर्मात्मा जन हों, जैसे वे धर्म मार्ग में वर्तें वैसे तू उसमें वर्ता कर। (सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास)

आचार्य धर्मवीर के बहुआयामी भव्य व्यक्तित्व की समता प्राप्त करने के लिए कोई भी प्रयास करना चाहेगा। उनके व्यक्तित्व पर कुछ लेख लिख देने से उनके पूर्ण व्यक्तित्व का समाकलन नहीं हो सकता। उनका व्यक्तित्व किसी के महिमा मण्डन का मोहताज नहीं। भगवान् करें, आचार्य धर्मवीर जैसे धर्मवीर आर्य समाज में अनेकों हो जावें, जिससे कृण्वन्तो विश्वमार्यम् का घोष साकार हो सके।

# पुस्तक समीक्षा

**पुस्तक का नाम**- रक्तसाक्षी पं. लेखराम

**लेखक**- प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

**प्रकाशक** - वेद प्रचारिणी सभा, चामधेड़ा, महेन्द्रगढ़, हरियाणा, **पृष्ठ**- ५६० **मूल्य**- ४००.००रु.

क्षितिज पर सूर्य, वो भी अस्ताचल की ओर। कहना क्या चाहता है? जरा सुनो तो। "ऐ दुनिया वालो! इसे अन्त न जान लेना। डर न जाना मेरे 'रक्त वर्ण' से। कुछ ही देर की तो बात है। कल फिर सवेरा होगा। फिर चमचमाता सूरज उगेगा। उधर दूर प्राची में फिर किरणों की हलचल होगी, फिर सारा जग प्रकाशित होगा। अन्धकार दूर किसी कोने में शरण ले लेगा बशर्ते तुम साहस न छोड़ना।" सूर्य के इसी दिलासे से दुनिया जीवित हो उठती है। वरना सूर्य के अन्त की कल्पना भी जीवन को शून्य कर दे। कुछ ऐसी ही कहानी पं. लेखराम की भी है। यह सूर्य भी अस्ताचल की ओर चलते-चलते समस्त आर्य जगत् को एक सन्देश दे गया था। अरे नहीं! आदेश दे गया था। वही तकरीर और तहरीर का आदेश जो समस्त आर्य साहित्य का आधार बना। जिस आदेश की पालना में अनेक दिग्गज समर्पित हो गये। पं. लेखराम की तो बात ही क्या, उनके अन्तिम शब्दों तक का ऋण चुकाने में भविष्य कभी समर्थ न हो सकेगा।

प्रस्तुत ग्रन्थ का प्रणयन उस लेखनी से हुआ है जो इतिहास लिखने का इतिहास लिख चुकी है। अर्थात् आदरणीय राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु'। यह ग्रन्थ लेखक के ७२ वर्षों की तड़प और परिश्रम का फल है। लेखक ने अनेक दुर्लभ तथ्यों को खोजकर इस ग्रन्थ में प्रकाशित किया है। इस ग्रन्थ के दो संस्करण पहले छप चुके हैं पर यह तृतीय संस्करण विशेष रूप से तैयार किया गया है। पं. लेखराम जी पर अब तक की ये सबसे बड़ी जीवनी है। पाठक इस बात का अवलोकन स्वयं करेंगे। यह ग्रन्थ लेखक का उपकार है आर्य जाति पर। लोगों का आने वाला समय तथा आने वाले समय के लोग दोनों ही इस बात का अनुभव करेंगे। इस ग्रन्थ को क्यों पढ़ें? इस प्रश्न के मेरी दृष्टि में दो प्रश्नात्मक उत्तर हैं-**यह ग्रन्थ किसका है? तथा किस पर है? ये दो प्रश्न ख्याल में ले लें तो बाकी प्रश्न अपना अस्तित्व खो देंगे। ऐसा हमारा विश्वास है।**

इस ग्रन्थ की समीक्षा करना हमारा प्रयोजन नहीं है। क्योंकि हमारे ईक्षण में इतनी शक्ति नहीं है जो इस ग्रन्थ की समीक्षा की जा सके। इसलिये जानकर विषय वस्तु के विषय में कुछ नहीं लिखा है और फिर शब्दों का भी ऐसा सामर्थ्य कहाँ? हाँ! हमारा विचार इतना जरूर है कि समय की जरूरत को ध्यान में रखते हुये प्रत्येक प्रबुद्ध पाठक के हाथ में यह ग्रन्थ होना चाहिए। क्योंकि पं. लेखराम इतिहास का महज एक पहलू नहीं है। **ये तो वह बुनियाद है जिस पर आर्य जगत् टिका हुआ है। ये तो वो शक्ति है जो आज शताधिक वर्षों के बाद भी क्रान्ति लाने में सक्षम है। वो तड़प है जो आसमां को भी कराहने पर मजबूर कर दे।** ये तो वह साहस है जो युवाओं को कुछ कर गुजरने के लिये बाधित कर दे। हम पर भरोसा न हो तो पूछ लेना उन इतिहास के पन्नों से जो रक्तरंजित हो दिन-रात यही उद्घोष करते हैं। जो अलमारियों के किन्हीं कोनों में अपनी हालत पर सिसकियाँ भरते हैं। स्वर मन्द जरूर हो गया, पर कहना उन्होंने आज तक न छोड़ा। अफसोस! उन्हें सुनने वालों ने अपने कान बन्द कर रखे हैं।

**सोमेश 'पाठक'**

०१ से १५ अगस्त २०१७

# संस्था – समाचार

**महर्षि दयानन्द शोधपीठ के प्रारूप पर विचार-विमर्श-** आचार्य धर्मवीर जी के नेतृत्व में परोपकारिणी सभा के सत्प्रयासों से महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय में महर्षि दयानन्द शोधपीठ की स्थापना व उसके लिये १ करोड़ रु. की राशि की घोषणा भी हुई।

इस शोधपीठ के लिये प्रो. प्रवीण माथुर को निदेशक नियुक्त किया गया। प्रो. प्रवीण माथुर पिछली तीन पीढ़ियों से आर्यसमाज की विचारधारा से जुड़े हुए हैं। आपके पिता डॉ. आर.पी. माथुर आर्यसमाज, सरदारपुरा, जोधपुर के कई वर्षों तक प्रधान रहे हैं। प्रो. माथुर इस विश्वविद्यालय में १९९३ से अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। इस समय प्रो. माथुर पर्यावरण विज्ञान विभाग के विभागध्यक्ष हैं। इन्होंने अपनी नियुक्ति के बाद ही शोधपीठ की प्रथम बैठक मान्य कुलपति जी की अध्यक्षता में दिनांक ११ अगस्त को आयोजित की, जिसमें परोपकारिणी सभा के अधिकारियों समेत अजमेर की विभिन्न आर्य समाजों के सभी प्रबुद्ध आर्यजनों को आमन्त्रित किया गया। बैठक में शोधपीठ के प्रारूप, पद्धति, एवं विषयों पर चर्चा हुई। आशा है कि यह शोधपीठ महर्षि दयानन्द के विचारों के विस्तार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायेगी।

उल्लेखनीय है कि इस शोधपीठ की स्थापना हेतु परोपकारिणी सभा के प्रधान आचार्य धर्मवीर जी द्वारा माननीय प्रधानमन्त्री महोदय को दि. २० जून २०१५ को पत्र लिखा गया था, जिसके प्रत्युत्तर में प्रधानमन्त्री कार्यालय द्वारा इस शोधपीठ को खोले जाने के विचार किये जाने हेतु मुख्य सचिव-राजस्थान सरकार को दि. २५ जून २०१५ को पत्र प्रेषित किया गया।

**श्रावणी उपाकर्म (रक्षाबंधन पर्व) सम्पन्न-** श्रावणी पर्व पर गुरुकुल परम्परा में उपनयन एवं वेदारम्भ संस्कार करने की परम्परा है। एतदर्थ प्रातः ६.३० बजे महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट विधि से आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान के नवीन विद्यार्थियों का उपनयन और वेदारम्भ संस्कार आरम्भ हुआ। ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण मन्त्रपाठ के पश्चात् उपाचार्य सत्येन्द्र जी ने विधिवत् संस्कार करवाया। ब्र. ज्ञानप्रकाश, ब्र. लालदेव, ब्र. दिवाकर, ब्र. अग्निवेश, ब्र. विश्वदेव, ब्र. मनुदेव, ब्र. प्रणव, ब्र. दिलीप, ब्र. उन्नीकृष्णन के यज्ञोपवीत एवं वेदारम्भ संस्कार सम्पन्न हुए। वेदमन्त्रों का पाठ ब्रह्मचारी वरुण देव ने किया। । पिता के रूप में श्री वासुदेव आर्य ने संस्कार में सक्रिय सहयोग दिया। वेदारम्भ संस्कार के अन्तर्गत सभी नवीन ब्रह्मचारियों ने दण्डधारण किया एवं भिक्षा माँगकर आचार्य को समर्पित किया। सोलह संस्कारों में उपनयन दसवां और वेदारम्भ ग्यारहवां संस्कार है। इस अवसर पर अनेक लोगों ने पुराना यज्ञोपवीत उतारकर नया यज्ञोपवीत धारण किया। संस्कार देखने आये नगर के आर्य स्त्री-पुरुषों तथा संन्यासी, वानप्रस्थियों ने सभी ब्रह्मचारियों को आशीर्वाद प्रदान किया।

सभी संस्कारित ब्रह्मचारियों को स्वामी मुक्तानन्द ने ब्रह्मचर्य का उपदेश देते हुए मानव जीवन में संस्कारों का महत्त्व बताया। स्वामी जी ने कहा कि विद्यार्थियों को गुरुकुल में विद्वानों के निकट ले जाना उपनयन है। विद्वान् गुरु विद्यार्थियों को परम गुरु ईश्वर के निकट ले जाने के लिए शिक्षा देते हैं। जैसे माता-पिता अपनी संतानों का हित चाहते हैं, वैसे ही आचार्य अपने शिष्यों का हित करने में सदा प्रयत्नशील रहते हैं। कोई भी विद्यार्थी किसी के कहने पर अधर्म न करे, चाहे वह आचार्य ही क्यों न हो। गुरुकुल में रहते हुए सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य का पालन करे। जीवन में उन्नति ज्ञान से ही होती है।

संस्कारों का महत्त्व बताते हुए **ब्र. वरुण** ने कहा कि संस्कार से मनुष्यों के गुणों में सकारात्मक परिवर्तन होता है। कर्मकाण्ड बाह्य संस्कार है। संस्कारों से उत्तरोत्तर उन्नति होती है। जीवन में स्थिरता आती है। संस्कार मील के पत्थर के समान हैं, जैसे मील के पत्थर से हमें लक्ष्य की

निकटता का पता चलता है वैसे ही विभिन्न संस्कारों से संस्कारित होकर हम ईश्वर की ओर बढ़ते हैं।

**संस्कृत दिवस, हैदराबाद सत्याग्रह दिवस-** यज्ञोपवीत एवं वेदारम्भ संस्कार के पश्चात् प्रात: १० बजे सरस्वती भवन में यह कार्यक्रम आयोजित किया गया। आर्यसमाज के वयोवृद्ध कार्यकर्त्ता श्री सोहनलाल कटारिया ने अपने विचार व्यक्त किये। श्री अनुपम आर्य ने कहा कि इतिहास के नाम पर बहुत सी असत्य घटनाओं को पढ़ाया जा रहा है। जैसे- हुमायूँ ने चित्तौड़ की रानी द्वारा राखी भेजने पर चित्तौड़ की रक्षा की, यह बात सत्य नहीं है। श्री मोहनचन्द, श्रीमती कुमुदिनी आर्य, ब्र. प्रशान्त ने भजन गाकर विचार व्यक्त किये। डॉ. नन्दकिशोर काबरा तथा श्रीमती पुष्पा क्षेत्रपाल ने कविता सुनाई। ब्र. दिलीप एवं ब्र. वरुण ने संस्कृत गीतिका प्रस्तुत की। ब्र. शिवनाथ ने संस्कृत में भाषण दिया। ब्र. रोशन, ब्र. सत्यव्रत एवं श्री आर्येश्वर ने भी अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये। श्री वासुदेव आर्य ने कार्यक्रम का संचालन किया, हैदराबाद सत्याग्रहियों को श्रद्धाञ्जलि देते हुए एक भावपूर्ण गीत सुनाया। स्वामी मुक्तानन्द परिव्राजक ने कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए कहा कि वैदिक संस्कृति और संस्कृत कभी नष्ट नहीं हो सकती। हमारा भविष्य अच्छा है। इस अवसर पर गुरुकुल के आचार्य एवं ब्रह्मचारीगण, संन्यासी, वानप्रस्थी, नगर आर्यसमाज के सदस्यगण एवं आश्रमवासी उपस्थित रहे।

**स्वतन्त्रता दिवस-** सायंकाल स्वतन्त्रता दिवस के उपलक्ष्य में ब्रह्मचारियों की गोष्ठी हुई। **ब्र. शिवनाथ, ब्र. रोशन** एवं **श्री आर्येश्वर** ने अपने विचार रखे।

**अतिथि-** महर्षि दयानन्द चित्र दीर्घा एवं वस्तु प्रदर्शनी देखने, विद्वानों-संन्यासियों से मिलने, यज्ञ-प्रवचन से लाभ लेने, भ्रमण तथा प्रचार हेतु ब्रह्मचारी, संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, गृहस्थ स्त्री-पुरुष-बच्चे आते रहते हैं। पिछले पन्द्रह दिनों में हिसार, देहरादून, दिल्ली, सूरत, नांगौर, पाली, गुलाबपुरा, पुष्कर, भरतपुर, जयपुर, जोधपुंर, हरिद्वार, सोनीपत, मेरठ आदि स्थानों से कुल ५२ अतिथि ऋषि उद्यान आये।

**जन्मदिन** - ऋषि उद्यान की यज्ञशाला में ७ अगस्त को परोपकारिणी सभा के कोषाध्यक्ष श्री सुभाष नवाल ने अपनी पत्नी श्रीमती रमा नवाल के जन्मदिन पर उनके साथ यज्ञ किया। सभा के सहयोगी श्री बाबूलाल चौहान के जुड़वाँ सुपौत्र और सुपौत्री पवन चौहान एवं प्रिया चौहान के जन्मदिन पर श्री पन्नालाल चौहान ने अपनी पत्नी और दोनों बच्चों के साथ यज्ञ किया। सभी यजमानों को आश्रमनिवासी, संन्यासियों, वानप्रस्थियों, विद्वानों तथा वृद्धजनों ने आशीर्वाद प्रदान किया। परोपकारिणी सभा परिवार की ओर से सब यजमानों की दीर्घ आयु की प्रार्थना करते हुए शुभकामनाएँ।

**प्रवचन-** परोपकारिणी सभा के वरिष्ठ सदस्य एवं प्रसिद्ध इतिहासविद् **प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु** ने कहा कि महर्षि दयानन्द का वेदभाष्य पूर्ण रूप से निर्भ्रान्त है। वेद का प्रत्येक मन्त्र सत्य का सार, ज्ञान प्राप्ति और व्यवहार का आधार है। वेद का ज्ञान पुराना होने पर भी जीर्ण-शीर्ण नहीं होता है, जैसे सूर्य और चन्द्रमा पुराना होने पर गर्मी और शीतलता पहले जैसी ही दे रहे हैं, पहले भी पानी से प्यास बुझती थी और आज भी बुझती है। महर्षि दयानन्द ने एकेश्वरवाद का प्रचार किया। मूर्तिपूजा आलसी, प्रमादी और निकम्मे लोगों की आत्मतुष्टि का साधन है, कोरा भ्रम है। ईश्वर की उपासना से उपासक को लाभ होता है, ईश्वर को नहीं। आर्यसमाज विश्व का सबसे बड़ा आस्तिक संगठन है। आपने आर्य समाज के इतिहास से अनेक प्रेरक प्रसंग सुनाए।

**शंका-समाधान-** प्रात:कालीन प्रवचन में ब्रह्मचारी प्रशान्त द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देते हुए **आचार्य सत्यजित्** ने कहा कि ईश्वर की उपस्थिति सब दिशाओं, सब पदार्थों में है। वह सबके भीतर व्याप्त होकर मन को नियन्त्रित करने वाला है। जो धार्मिक लोग उसको सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान और अन्तर्यामी जानकर, मन से स्वीकार करते हैं वे सुखी होते हैं।

**आचार्य कर्मवीर जी** ने कहा कि वेद शास्त्रों के अनुसार धर्म ही सुख का मूल है और पाप ही दुख का मूल।

सोमवार से शुक्रवार तक सायंकालीन प्रवचन में महर्षि दयानन्द कृत 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' का पाठ एवं चर्चा होती है। **उपाचार्य सत्येन्द्र जी** ने कहा कि स्वामी दयानन्द जी ने जैसे सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक के आरम्भ में ईश्वर के नामों की व्याख्या लिखी, वैसे ही चारों वेदों की इस भूमिका का आरम्भ करते हुए ईश्वर प्रार्थना विषय पर विस्तार से लिखा है। वेदों का मूल विषय ईश्वर ही है। इसलिये प्रेम से ईश्वर की प्रार्थना कैसे करें इसका ज्ञान होना चाहिये।

**ब्र. विशाल जी** एवं **ब्र. रूपेश जी** ने भी यज्ञवेदी से व्याख्यान दिये।

# आर्यजगत् के समाचार

**१. उपनयन संस्कार**- पं. ऋषिराम आर्योपदेशक महाविद्यालय केरल में इस वर्ष श्रावणी पर्व पर परम्परागत रूप में नवागत विद्यार्थियों का उपनयन एवं वेदारम्भ संस्कार किया गया। संस्कार आचार्य चतुर्भुज के ब्रह्मत्व में आचार्य वामदेव ने किया। आचार्य वामदेव परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित गुरुकुल ऋषि उद्यान के स्नातक हैं।

**२. शिविर**- आनन्दधाम (गढ़ी आश्रम) उधमपुर, जम्मू में महात्मा चैतन्यस्वामी की अध्यक्षता एवं सत्यप्रिया यति जी के सान्निध्य में दिनांक १० से १७ सितम्बर २०१७ तक नि:शुल्क योग-ध्यान-साधना शिविर का आयोजन किया गया है, जिसमें उपासना, प्राणायाम, योगासन आदि कराए जाएंगे तथा योगदर्शन एवं उपनिषद् के पठन-पाठन की भी व्यवस्था है। इच्छुक साधक अपना स्थान आरक्षित करें। सम्पर्क सूत्र- ०९४१९१०७७८८, ०९४१९७९६९४९

**३. यज्ञशाला का उद्घाटन**- आर्यसमाज मन्दिर पुतलीघर, अमृतसर में नवनिर्मित यज्ञशाला का उद्घाटन एवं शुभारम्भ दि. ३० जुलाई २०१७ को समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। आर्यसमाज के वैदिक विद्वान् पं. सत्यपाल जी पथिक द्वारा बड़ी श्रद्धा के साथ वेद मन्त्रोचारण कर यज्ञ करवाया गया और साथ-साथ भावार्थ भी समझाए गए।

**४. आवश्यकता**- आर्यसमाज, डी-१०३, उदय सिटी, पल्लवपुरम फेस-२, मेरठ में एक आर्य पुरोहित की आवश्यकता है। मासिक वेतन रु. ५०००/- (विद्युत् रहित ठहरने की व्यवस्था समाज की होगी) भोजन व्यवस्था पुरोहित की स्वयं की होगी।

**५. वेद प्रचार सप्ताह**- आर्यसमाज खलासी लाइन सहारनपुर, उ.प्र. के वेद प्रचार सप्ताह के साथ दिवसीय कार्यक्रम महिला सम्मेलन के अन्तर्गत आर्यजगत् के विख्यात् रचनाकार एवं भजनोपदेशक पं. सत्यपाल पथिक का अभूतपूर्व अभिनन्दन किया गया। राजकुमार आर्य व रमेश राजा ने अभिनन्दन पत्र भेंट किया।

**६. वेद सप्ताह का समापन**- आर्यसमाज राजगढ़, अलवर, राज. में दि. ६ से १५ अगस्त २०१७ तक १० दिवसीय वेद सप्ताह का समापन हुआ। यज्ञ के आचार्य एवं उपप्रधान पं. विनोदीलाल दीक्षित एवं मन्त्री गैंदालाल सैनी का विशेष योगदान रहा।

**७. श्रावणी उपाकर्म सम्पन्न**- आर्यसमाज, सैक्टर २२ ए चण्डीगढ़ में दि. ३१ जुलाई से ०६ अगस्त २०१७ तक श्रावणी उपाकर्म पर चतुर्वेदशतकम् पारायण यज्ञ किया गया। इस अवसर पर यज्ञोपवीत महोत्सव का आयोजन भी किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य राजू वैज्ञानिक-दिल्ली थे, वेदपाठ श्रीमती विनीता वेदरत्न-वाराणसी ने किया। श्री कल्याणसिंह वेदी के भजन हुए। डॉ. सूर्यदेव आर्य, स्वामी ब्रह्मवेश आदि के प्रवचन हुए।

८. राजस्थान के भीलवाड़ा जिले में निम्नलिखित नये आर्यसमाज स्थापित किये गये

१. **आर्यसमाज कनेछनकलाँ** प्रधान- मदनलाल शर्मा, मन्त्री-वल्लभ अजमेरा, कोषाध्यक्ष-परमेश्वर पाण्डे, कुल सदस्य-११

२. **आर्य समाज करेड़ा** प्रधान-बंशीलाल साहू, मन्त्री-बालूलाल सुथार, कोषाध्यक्ष-मदनलाल प्रजापत, कुल सदस्य-१२

३. **महिला आर्य समाज, शास्त्री नगर-हमीरगढ़ (रेलवे स्टेशन)** प्रधाना-सत्यकँवर राजपूत, मन्त्राणी-सम्पत देवी छीपा, कोषाध्यक्ष-बबली शर्मा, कुल सदस्य-२२

४. **आर्य समाज सुवाणा** प्रधान-शंकर लाल टेलर, मन्त्री-अक्षय कुमार आर्य, कोषाध्यक्ष-देवकीनन्दन शर्मा, कुल सदस्य-५

५. **आर्य समाज कोटड़ी** प्रधान-रमेशचन्द्र डीडवानियाँ, मन्त्री-ओमप्रकाश टेलर, कोषाध्यक्ष-कैलाश चन्द्र जोशी, कुल सदस्य-११

६. **आर्य समाज, वकील कॉलोनी-माण्डलगढ़** प्रधान-केसरीमल मेवाड़ा, मन्त्री- पूरणमल आर्य, कोषाध्यक्ष-सत्यनारायण जीनगर, कुल सदस्य-१२

७. **आर्य समाज बिजोलियाँ** प्रधान-किशोर कुमार चन्द्रवाल, मन्त्री-अलका चन्द्रवाल, कोषाध्यक्ष-ममता जूनीवाल, कुल सदस्य-९

### शोक समाचार

९. आर्यसमाज व गुरुकुलों के एक श्रेष्ठ कार्यकर्ता १०१ वर्षीय **देवसीराम आर्य** का निधन १८ अगस्त २०१७ को हो गया। उनका अन्तिम संस्कार वैदिक रीति से ग्राम मुन्नावाली, सिरसा में हुआ। **परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।**

आर्य महासम्मेलन अमेरिका में परोपकारिणी सभा के सदस्य स्वामी विष्वङ् 'परिव्राजक'

श्रावणी पर्व पर आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान के नव-दीक्षित ब्रह्मचारीगण एवं मध्य में स्वामी मुक्तानन्द 'परिव्राजक', आचार्य सत्येन्द्र आर्य एवं आचार्य कर्मवीर आर्य

आर जे/ए जे/80/2015-2017 तक प्रेषण: ३० अगस्त, २०१७ आर.एन.आई. ३९५९/५९

हैदराबाद प्रचार यात्रा के अन्तर्गत प्रो. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' की पुस्तक 'वैदिक इस्लाम' का विमोचन करते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के प्रधान ठा. लक्ष्मण सिंह ( बीच में )

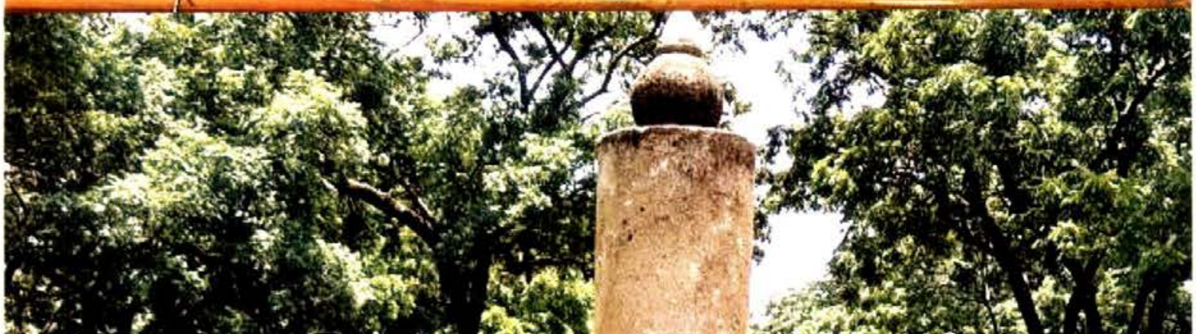

क्रान्तिवीर पं. नरेन्द्र जी की स्मृति में स्थापित यह स्तम्भ [illegible] ( कालापानी ) में [illegible] मी. दूरी पर है।

प्रेषक:
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर ( राजस्थान ) ३०५००१